मुनि नेमिचन्द सिद्धान्तिदेव-रचित

द्रव्यसंग्रह

(व्याकरणिक विश्लेषण, अन्वय, व्याकरणात्मक अनुवाद)

संपादन

डॉ. कमलचन्द सोगाणी

अनुवादक

श्रीमती शकुन्तला जैन

प्रकाशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

राजस्थान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मुनि नेमिचन्द सिद्धान्तिदेव-रचित

द्रव्यसंग्रह

(व्याकरणिक विश्लेषण, अन्वय, व्याकरणात्मक अनुवाद)

संपादन

डॉ. कमलचन्द सोगाणी

निदेशक

जैनविद्या संस्थान-अपभ्रंश साहित्य अकादमी

अनुवादक

श्रीमती शकुन्तला जैन

सहायक निदेशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

प्रकाशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

राजस्थान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

◈ प्रकाशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

श्री महावीरजी - 322 220 (राजस्थान)

दूरभाष - 07469-224323

◈ प्राप्ति-स्थान

1. साहित्य विक्रय केन्द्र, श्री महावीरजी

2. साहित्य विक्रय केन्द्र

दिगम्बर जैन नसियाँ भट्टारकजी

सवाई रामसिंह रोड, जयपुर - 302 004

दूरभाष - 0141-2385247

◈ प्रथम संस्करण : अप्रेल, 2013

◈ सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

◈ मूल्य -200 रुपये

◈ ISBN 978-81-926468-1-7

◈ पृष्ठ संयोजन

फ्रैण्ड्स कम्प्यूटर्स

जौहरी बाजार, जयपुर - 302 003

दूरभाष - 0141-2562288

◈ मुद्रक

जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि.

एम.आई. रोड, जयपुर - 302 001

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
	प्रकाशकीय	V
1.	ग्रंथ एवं ग्रंथकारः सम्पादक की कलम से	1
2.	द्रव्यसंग्रह से प्राकृत भाषा कैसे सीखें?	5
3.	संकेत-सूची	6
4.	पहला अधिकार (छह द्रव्य, पंचास्तिकाय का निरूपण)	10
5.	दूसरा अधिकार (सात तत्त्व, नव पदार्थ का निरूपण)	38
6.	तीसरा अधिकार (मोक्षमार्ग का निरूपण)	50
7.	मूल पाठ	71
8.	परिशिष्ट-1	46
	(i) संज्ञा-कोश	79
	(ii) क्रिया-कोश	90
	(iii) कृदन्त-कोश	92
	(iv) विशेषण-कोश	94
	(v) संख्या-कोश	99
	(vi) सर्वनाम-कोश	100
	(vii) अव्यय-कोश	101
	परिशिष्ट-2	
	छंद	105
	सहायक पुस्तकें एवं कोश	109

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

मुनि नेमिचन्द सिद्धान्तिदेव-रचित **'द्रव्यसंग्रह'** व्याकरणिक विश्लेषण, अन्वय एवं व्याकरणात्मक अनुवाद सहित अध्ययनार्थियों के हाथों में समर्पित करते हुए हमें हर्ष का अनुभव हो रहा है।

'द्रव्यसंग्रह' जैनधर्म-दर्शन को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करनेवाली प्राकृत भाषा में रचित एक महत्त्वपूर्ण रचना है। इसमें कुल 58 गाथाएँ हैं जिनमें छह द्रव्यों, नौ पदार्थों और मोक्षमार्ग का निरूपण किया गया है। यह निरूपण पारम्परिक होते हुए भी कई विशेषताएँ लिये हुए हैं- 1. जीव का स्वरूप निश्चय-व्यवहार नय को आधार मानकर समझाया गया है। 2. सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र का वर्णन भी निश्चय-व्यवहार नय के माध्यम से किया गया है। 3. ध्यान का वर्णन करते समय उत्कृष्ट ध्यान की रीति भी भलीभाँति समझाई गई है।

पण्डित जयचन्दजी छाबड़ा ने लिखा है: ''इसमें तीन अधिकार हैं। पहला षट्द्रव्य, पंचास्तिकाय के निरूपण का अधिकार है। उसमें 27 गाथाएँ हैं। पहली गाथा तो मंगलाचरणरूप है, दूसरी गाथा जीव के नव अधिकारों के नामों के संग्रहरूप है, बारह गाथाओं में जीवद्रव्य का नव अधिकारों से विवरण है, आठ गाथाओं में अजीवद्रव्य का कथन है, फिर पाँच गाथाओं में पंचास्तिकाय का प्ररूपण है। दूसरा सात तत्त्व, नव पदार्थ के निरूपण का अधिकार है। इसमें 11 गाथाएँ हैं। तीसरा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अधिकार मोक्षमार्ग के निरूपण का अधिकार है। इसमें 20 गाथाएँ हैं। आठ गाथाओं में निश्चय-व्यवहाररूप मोक्षमार्ग का प्ररूपण है, ग्यारह गाथाओं में ध्यान का व्याख्यान है और ग्रंथ की अंतिम गाथा में स्वागता छंद में प्राकृतरूप में आचार्य ने अपनी लघुता प्रकट की है। इस प्रकार अट्ठावन गाथाओं में ग्रन्थ समाप्त किया है।''

द्रव्यसंगह में मात्रिक व वर्णिक छंद का प्रयोग किया गया है। सत्तावन गाथाओं में मात्रिक व अंतिम गाथा में वर्णिक छंद है। मात्रिक छंद में गाहा व उग्गाहा छंद प्रयुक्त हुए हैं।

'द्रव्यसंग्रह' इस प्रकार तैयार किया गया है कि अध्ययनार्थी 'द्रव्यसंग्रह' से प्राकृत भाषा सीख सकें। प्राकृत भाषा को सीखने-समझने की दिशा में यह प्रथम व अनूठा प्रयास है। इसका प्रस्तुतिकरण अत्यन्त सहज, सरल, सुबोध एवं नवीन शैली में किया गया है जो पाठकों के लिए अत्यन्त उपयोगी होगा। इस पुस्तक में गाथाओं का व्याकरणिक विश्लेषण, अन्वय तथा व्याकरणात्मक अनुवाद दिया गया है। इसके पश्चात संज्ञा-कोश, क्रिया-कोश, कृदन्त-कोश, विशेषण-कोश, संख्या-कोश, सर्वनाम-कोश, अव्यय-कोश दिये गये हैं। गाथाओं में प्रयुक्त छंदो के नाम दिये गये हैं जिससे पाठक छंद का ज्ञान भी प्राप्त कर सकता है। यह पुस्तक पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी, और पाठक **'द्रव्यसंग्रह'** के माध्यम से प्राकृत भाषा का समुचित ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे, ऐसी आशा है।

श्रीमती शकुन्तला जैन, एम.फिल. ने बड़े परिश्रम से **'द्रव्यसंग्रह'** को प्रस्तुत किया है जिससे अध्ययनार्थी प्राकृत भाषा को सीखने में अनवरत उत्साह बनाये रख सकेंगे। अतः वे हमारी बधाई की पात्र हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुस्तक-प्रकाशन के लिए अपभ्रंश साहित्य अकादमी के विद्वानों विशेषतया श्रीमती शकुन्तला जैन के आभारी हैं जिन्होंने **'द्रव्यसंग्रह'** का व्याकरणात्मक अनुवाद करके प्राकृत के पठन-पाठन को सुगम बनाने का प्रयास किया है।

पृष्ठ संयोजन के लिए फ्रेण्ड्स कम्प्यूटर्स एवं मुद्रण के लिए जयपुर प्रिण्टर्स धन्यवादार्ह है।

जस्टिस नगेन्द्र कुमार जैन	**प्रकाशचन्द्र जैन**	**डॉ. कमलचन्द सोगाणी**
अध्यक्ष	मंत्री	संयोजक
प्रबन्धकारिणी कमेटी		जैनविद्या संस्थान समिति
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी		जयपुर

वीर निर्वाण संवत्-2539

23.04.2013

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थ और ग्रन्थकार

संपादक की कलम से

आचार्य नेमिचन्द सिद्धान्तिदेव द्वारा रचित द्रव्यसंग्रह 11 वीं शताब्दी की कृति है। शौरसेनी प्राकृत भाषा की 58 गाथाओं में रचित यह रचना लघु होते हुए भी सारगर्भित, मौलिक और अपूर्व है। यह असंदिग्ध है कि नेमिचन्द मुनि के सम्मुख आचार्य कुन्दकुन्द का साहित्य और नेमिचन्द्राचार्य रचित गोम्मटसार जीवकाण्ड व कर्मकाण्ड थे। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने इनका गहन अध्ययन किया और इनसे प्राप्त ज्ञान को एक सुन्दर माला में संजोकर अपने व्यक्तिगत साधना के अनुभव को इसमें जोड़कर द्रव्यसंग्रह तैयार किया। निस्सन्देह यह ग्रन्थ मोक्षमार्ग के साधकों को दृष्टि में रखकर ही लिखा गया है, किन्तु इसमें जैन अध्यात्म के सारभूत तत्त्व सम्मिलित किये गये हैं।

इसमें ध्यान का विलक्षण प्रतिपादन है। निश्चय-व्यवहार की समझ वादविवाद से हल नहीं की जा सकती है। ध्यान से ही इसके भेद को हृदयंगम किया जा सकता है। निश्चय-व्यवहार को यह ग्रन्थ बहुत ही सहज रूप में साथ लेकर चला है। भावनिर्जरा में 'भुत्तरसं' की धारणा मौलिक है। इस तरह से पारंपरिक प्रतिपादन में कुछ नई आध्यात्मिक धारणाएँ इस ग्रन्थ को उच्चस्तरीय स्वीकारने के लिए बाध्य करती है। इस ग्रन्थ का पाठ करने पर पूरा जैन-धर्म-दर्शन आँखों के सामने सदैव उपस्थित रहेगा और साधक पदच्युत होने से बचेगा। लगता है इन बातों के कारण ही द्रव्यसंग्रह को कण्ठस्थ करना मुनिचर्या का हिस्सा बन गया है। ग्रन्थ की इन्हीं महत्त्वपूर्ण बातों के कारण मेरे सुझाव पर श्रीमती शकुन्तला जैन, एम. फिल. ने प्राकृत का व्याकरणिक विश्लेषण और इसका व्याकरणात्मक हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया है। इस प्रकार के प्रस्तुतिकरण से प्राकृत भाषा इस ग्रन्थ से सीखी जा सकेगी, ऐसी आशा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नेमिचन्द मुनि ने द्रव्यसंग्रह में जैनधर्म की प्रायः सभी मौलिक अवधारणाओं को स्थान दिया है- उदाहरणार्थ, जीव का स्वरूप व जीवों का वर्गीकरण, उपयोग की धारणा, पुद्गल का स्वरूप, प्रदेश की धारणा, कर्मों का पुद्गलात्मक होना, सम्यग्दर्शन का स्वरूप, तार्किक ज्ञान और सम्यग्ज्ञान में भेद, पंचास्तिकाय की धारणा, उत्पाद-व्यय और ध्रौव्य की धारणा, निश्चय और व्यवहार का गाथाओं में प्रयोग आदि। ये सभी अवधारणाएँ नेमिचन्द मुनि को परंपरा से प्राप्त हुई हैं जिनको उन्होंने अपने ग्रन्थ में स्थान देकर जैनधर्म को संक्षेप में प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की है।

द्रव्यसंग्रह के तीन अधिकारों में षड् द्रव्य-सप्त तत्त्व-मोक्ष की अवधारणा को समझाया गया है जो प्रस्तुत हैः-

जिसके तीन काल में चार प्राण- इन्द्रिय, बल, आयु, श्वास निकालना और श्वास लेना होते हैं वह व्यवहारनय से जीव है किन्तु निश्चयनय से जीव निस्सन्देह चैतन्य होता है। वर्ण, रस, गंध, स्पर्श ये निश्चयनय से जीव में नहीं होते हैं उस कारण से जीव अमूर्तिक है। व्यवहारनय से जीव कर्म पुद्गल के बंध से मूर्तिक होता है। अनेक प्रकार के स्थावर एकेन्द्रिय जीव होते हैं, जैसे- पृथ्वी, जल, तेज, वायु, और वनस्पति। दो इन्द्रिय से जाननेवाले, तीन इन्द्रिय से जाननेवाले, चार और पाँच इन्द्रियों से जाननेवाले त्रस जीव होते हैं, जैसे- शंख आदि।

जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल छह द्रव्य है। रूपादि गुणवाला होने से पुद्गल मूर्तिक होता है किन्तु शेष जीव, धर्म, अधर्म, आकाश और काल अमूर्तिक होते हैं। शब्द, बंध (बंधन), सूक्ष्म-स्थूल संस्थान (आकृति), भेद (टुकड़े-टुकड़े होना), तम (अंधकार), छाया, उद्योत (प्रकाश), आतप (सूर्य, अग्नि आदि की गर्मी) पुद्गल की पर्यायें हैं। गति में परिवर्तित पुद्गल और जीवों के लिए धर्म द्रव्य गति में सहकारी होता है, जैसे- मछलियों के लिए जल किन्तु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वह धर्म द्रव्य ठहरी हुई मछलियों को गति नहीं कराता अर्थात् गति में प्रेरक नहीं होता। स्थितियुक्त पुद्गल और जीवों के लिए अर्थात् ठहरे हुओं के लिए अधर्म द्रव्य स्थिति में सहकारी होता है, जैसे- पथिकों के लिए छाया किन्तु वह अधर्म द्रव्य चलते हुए पथिकों को ठहराता नहीं है अर्थात् ठहराने में प्रेरक नहीं होता। आकाश द्रव्य- लोकाकाश, अलोकाकाश के भेद से दो प्रकार का है। जो जीव आदि द्रव्यों को अवकाश (जगह) देने में योग्य (समर्थ) है वह लोकाकाश है उससे आगे अलोकाकाश कहा गया है। द्रव्य में पहिचानने योग्य परिवर्तन आदि काल का द्योतक होता है वह व्यवहार काल है और पहचानने योग्य परिवर्तन का आधार, परमार्थकाल होता है। परिवर्तन 'समय' में होता है अतः उसका आधार काल द्रव्य ही परमार्थ काल है।

आत्मा के जिस भाव से कर्म को प्रवेश मिलता है वह भावास्रव है। ज्ञानावरण कर्म आदि के योग्य जो पुद्गल भाव के साथ-साथ आता है, वह द्रव्यास्रव है। आत्मा के राग-द्वेषादि भाव से कर्म बांधा जाता है वह भावबंध है और कर्म तथा आत्मा के प्रदेशों का परस्पर/आपस में प्रवेश वह द्रव्यबंध है। आत्मा का भाव जो कर्म के आस्रव को रोकने में कारण है वह भावसंवर है और जो द्रव्यास्रव को रोकने में कारण है वह द्रव्यसंवर है। आत्मा के जिस भाव से भोगा हुआ सुखात्मक और दुखात्मक रस विलीन हो जाता है वह भाव निर्जरा और उचित समय आने पर तप द्वारा पुद्गलकर्म उस आत्मा का नष्ट होता है वह द्रव्य निर्जरा है। जो सब कर्म के नाश का कारण आत्मा का परिणाम है वह भावमोक्ष है और कर्म की आत्मा से पृथक अवस्था द्रव्यमोक्ष है।

व्यवहार नय से सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र मोक्ष का कारण है। निश्चयनय से सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्रमय अपनी आत्मा ही है। आत्मा को छोड़कर अन्य द्रव्य में रत्नत्रय विद्यमान नहीं होता, इसलिए निश्चय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से आत्मा ही मोक्ष का कारण होता है। जीव आदि पर श्रद्धा सम्यक्त्व है। वह सम्यक्त्व रत्नत्रययुक्त आत्मा का स्वरूप ही है। सम्यक्त्व विद्यमान होने पर तार्किक दोष से रहित ज्ञान भी सम्यक् अध्यात्म दृष्टिवाला हो जाता है। अशुभ भाव से निवृत्ति और शुभ भाव में प्रवृत्ति व्यवहारनय से चारित्र है। वह चारित्र व्रत, समिति और गुप्ति से युक्त होता है। संसार के कारणों का विनाश करने के लिए ज्ञानी के जो बाह्य (शुभ-अशुभात्मक) और अंतरंग विकल्पात्मक क्रियाओं का निरोध है वह उत्कृष्ट सम्यक्चारित्र है। चूँकि दो प्रकार के (निश्चय और व्यवहार रूप) मोक्ष के कारण को मुनि ध्यान में अनिवार्य रूप से प्राप्त करते हैं इसलिए अनवरत प्रयास सहित चित्त से ध्यान का खूब अभ्यास करना चाहिये। अद्भुत ध्यान की सम्पन्नता के लिए तो स्थिर चित्त करो और उसके लिये इष्ट-अनिष्ट पदार्थों में तादात्म्य करके मूर्च्छित मत होवो, आसक्त मत होवो और उन पर दोष मत थोपो। किसी पदार्थ का थोड़ा भी ध्यान करते हुए एकाग्रता को प्राप्त करके साधुजन निष्काम वृत्तिवाले हो जाते हैं तब उनके उस ध्यान को निश्चय ध्यान कहा गया है। कुछ भी काय की क्रिया मत करो, कुछ भी मत बोलो, कुछ भी विचार मत करो जिससे आत्मा आत्मामें तृप्त हुआ स्थिर हो जाता है। यही सर्वोत्तम/उत्कृष्ट ध्यान होता है।

द्रव्यसंग्रह में जो पारिभाषिक शब्दावली आई है, उसकी व्याख्या करने का हमने प्रयत्न नहीं किया है, उसको पं. चैनसुखदास न्यायतीर्थ के द्वारा संपादित 'अर्हत् प्रवचन' से, श्री ब्रह्मदेव की टीका से तथा श्री जयचन्द जी छाबड़ा की ढूँढारी भाषा की टीका से समझा जा सकता है। हमारा मूल उद्देश्य यहाँ द्रव्यसंग्रह के माध्यम से प्राकृत सिखाना है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्यसंग्रह से प्राकृत भाषा कैसे सीखें?

द्रव्यसंग्रह से प्राकृत भाषा सीखने के लिए कुछ सोपान दिए जा रहे हैं जिनको हृदयंगम करने से आप सरल एवं सुचारु रूप से प्राकृत भाषा सीख सकते हैं-

1. सर्वप्रथम आप 'प्राकृत रचना सौरभ' में से प्रारम्भिक (पृष्ठ vii, viii) पढ लें।
2. द्रव्यसंग्रह में दी गयी संकेत-सूची समझ लें।
3. द्रव्यसंग्रह में दिये गये संज्ञा-कोश, क्रिया-कोश, कृदन्त-कोश, विशेषण-कोश, संख्या-कोश, सर्वनाम-कोश, अव्यय-कोश का अध्ययन कर लें।
4. द्रव्यसंग्रह की मूलगाथा एवं व्याकरणिक विश्लेषण को पढ लें।
5. गाथाओं के अन्वय एवं व्याकरणात्मक अनुवाद को व्याकरणिक विश्लेषण के साथ पढें।
6. संज्ञा एवं सर्वनाम शब्दों की रूपावली के लिए **'प्राकृत रचना सौरभ'** के पाठ 84 का अध्ययन कर लें।
7. संख्यावाची शब्दों की रूपावली के लिए **'प्रौढ प्राकृत रचना सौरभ' (भाग-1)** के पाठ 4 का अध्ययन कर लें।
8. अनियमित कर्मवाच्य और अनियमित भूतकालिक कृदन्त के लिए **'प्राकृत अभ्यास सौरभ'** के अभ्यास 39 एवं अभ्यास 40 का अध्ययन कर लें।
9. अंत में द्रव्यसंग्रह की गाथाओं में प्रयुक्त छंदों को समझना उपयोगी होगा।

इस प्रकार अध्ययन करने से आप प्राकृत भाषा को भलीभाँति सीख सकेंगे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संकेत–सूची

प्राकृत भाषा को अच्छी तरह समझने के लिए गाथा में निहित प्रत्येक पद जैसे-संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण, कृदन्त आदि का व्याकरणिक रूप से विश्लेषण करने का ज्ञान होना अति आवश्यक है। व्याकरणिक विश्लेषण को भलीभाँति समझने के लिए संकेत-सूची प्रस्तुत की जा रही है, जिसके माध्यम से आप गाथाओं में दिये गये संकेतों को भलीभाँति समझ सकेंगे।

अ – अव्यय (इसका अर्थ = लगाकर लिखा गया है)

अक - अकर्मक क्रिया

अनि - अनियमित

कर्म - कर्मवाच्य

क्रिविअ - क्रिया विशेषण अव्यय (इसका अर्थ = लगाकर लिखा गया है)

नपुं. - नपुंसकलिंग

पु. - पुल्लिंग

भूकृ - भूतकालिक कृदन्त

व - वर्तमानकाल

वकृ - वर्तमान कृदन्त

वि - विशेषण

विधि - विधि

विधिकृ - विधि कृदन्त

स - सर्वनाम

संकृ - संबंधक कृदन्त

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सक - सकर्मक क्रिया

सवि - सर्वनाम विशेषण

स्त्री. - स्त्रीलिंग

•()- इस प्रकार के कोष्ठक में मूल शब्द रखा गया है।

•[()+()+().....] इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर + चिह्न शब्दों में संधि का द्योतक है। यहाँ अन्दर के कोष्ठकों में गाथा के शब्द ही रख दिये गये हैं।

•[()-()-().....] इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर '-' चिह्न समास का द्योतक है।

{[()+()+().....]वि} जहाँ समस्त पद विशेषण का कार्य करता है वहाँ इस प्रकार के कोष्ठक का प्रयोग किया गया है।

•जहाँ कोष्ठक के बाहर केवल संख्या (जैसे 1/1, 2/1 आदि) ही लिखी है वहाँ उस कोष्ठक के अन्दर का शब्द **'संज्ञा'** है।

•जहाँ **कर्मवाच्य, कृदन्त** आदि **प्राकृत** के नियमानुसार नहीं बने हैं वहाँ कोष्ठक के बाहर **'अनि'** भी लिखा गया है।

क्रिया-रूप निम्न प्रकार लिखा गया है-

1/1 **अक** या **सक** - उत्तम पुरुष/एकवचन

1/2 **अक** या **सक** - उत्तम पुरुष/बहुवचन

2/1 **अक** या **सक** - मध्यम पुरुष/एकवचन

2/2 **अक** या **सक** - मध्यम पुरुष/बहुवचन

3/1 **अक** या **सक** - अन्य पुरुष/एकवचन

3/2 **अक** या **सक** - अन्य पुरुष/बहुवचन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विभक्तियाँ निम्न प्रकार लिखी गई हैं–

1/1 - प्रथमा/एकवचन
1/2 - प्रथमा/बहुवचन
2/1 - द्वितीया/एकवचन
2/2 - द्वितीया/बहुवचन
3/1 - तृतीया/एकवचन
3/2 - तृतीया/बहुवचन
4/1 - चतुर्थी/एकवचन
4/2 - चतुर्थी/बहुवचन
5/1 - पंचमी/एकवचन
5/2 - पंचमी/बहुवचन
6/1 - षष्ठी/एकवचन
6/2 - षष्ठी/बहुवचन
7/1 - सप्तमी/एकवचन
7/2 - सप्तमी/बहुवचन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्यसंग्रह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पहला अधिकार
(छह द्रव्य, पंचास्तिकाय का निरूपण)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

1. जीवमजीवं दव्वं जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं।
देविंदविंदवंदं वंदे तं सव्वदा सिरसा।।

जीवमजीवं	[(जीवं)+(अजीवं)]	
	जीवं (जीव) 1/1	जीव
	अजीवं (अजीव) 1/1 वि	अजीव
दव्वं	(दव्व) 1/1	द्रव्य
जिणवरवसहेण	[(जिणवर)-	जिनवर
	(वसह) 3/1]	ऋषभ के द्वारा
जेण	(ज) 3/1 सवि	जिस (जिन) के द्वारा
णिद्दिट्ठं	(णिद्दिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया है
देविंदविंदवंदं	[(देविंद)-(विंद)-(वंद)	देवेन्द्रों के समूह द्वारा
	विधिकृ 2/1 अनि]	वंदनीय
वंदे	(वंदे) व 1/1 सक अनि	प्रणाम करता हूँ
तं	(त) 2/1 सवि	उनको
सव्वदा	अव्यय	सदा
सिरसा	(सिरसा) 3/1 अनि	सिर से

अन्वय– जेण जिणवरवसहेण जीवमजीवं दव्वं णिद्दिट्ठं तं देविंदविंदवंदं सव्वदा सिरसा वंदे।

अर्थ– जिन जिनवर (अरिहंत) ऋषभ के द्वारा जीव-अजीव द्रव्य कहा गया है उन देवेन्द्रों के समूह द्वारा वंदनीय (ऋषभदेव) को (मैं) सदा सिर से प्रणाम करता हूँ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

2. जीवो उवओगमओ अमुत्ति कत्ता सदेहपरिमाणो।
भोत्ता संसारत्थो सिद्धो सो विस्स सोड्ढगई।।

जीवो	(जीव) 1/1 वि	जीवरूप
उवओगमओ	(उवओगमअ) 1/1 वि	उपयोगमय
*अमुत्ति (मूलशब्द)	(अमुत्ति) 1/1 वि	अमूर्तिक
कत्ता	(कत्तु) 1/1 वि	कर्ता
सदेहपरिमाणो	{[(स-देह)-(परिमाण) 1/1] वि}	अपनी देह के परिमाणवाला
भोत्ता	(भोत्तु) 1/1 वि	भोक्ता
संसारत्थो	(संसारत्थ) 1/1 वि	संसार में स्थित
सिद्धो	(सिद्ध) 1/1 वि	सिद्ध
सो	(त) 1/1 सवि	वह
*विस्स (मूलशब्द)	(विस्स) 7/1	लोक में/तक
सोड्ढगई	[(स)+(उड्ढगई)] [(स) वि -(उड्ढगइ) 1/1]	उर्ध्वगति सहित

अन्वय– सो जीवो उवओगमओ अमुत्ति कत्ता सदेहपरिमाणो भोत्ता संसारत्थो सिद्धो विस्स सोड्ढगई।

अर्थ– वह (जीव द्रव्य) जीवरूप, उपयोगमय, अमूर्तिक, कर्ता, अपनी देह के परिमाणवाला, भोक्ता, संसार में स्थित, सिद्ध, लोक में/तक उर्ध्वगति सहित (होता है)।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है।
(पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

3. तिक्काले चदुपाणा इंदियबलमाउआणपाणो य।
ववहारा सो जीवो णिच्छयणयदो दु चेदणा जस्स।।

तिक्काले	(तिक्काल) 7/1	तीन काल में
चदुपाणा	[(चदु) वि-(पाण) 1/2]	चार प्राण
इंदियबलमाउ-	[(इंदियबलं)+(आउ-	
आणपाणो	आणपाणो)]	
	[(इंदिय)-(बल) 1/1]	इन्द्रिय, बल,
	[(आउ)-(आणपाण) 1/1]	आयु, श्वास निकालना और श्वास लेना
य	अव्यय	और
ववहारा	(ववहार) 5/1	व्यवहार (नय) से
सो	(त) 1/1 सवि	वह
जीवो	(जीव) 1/1	जीव
णिच्छयणयदो	(णिच्छयणय) 5/1 पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	निश्चयनय से
दु	अव्यय	निस्सन्देह
चेदणा	(चेदणा) 1/1	चैतन्य
जस्स	(ज) 6/1 सवि	जिसके

अन्वय– जस्स तिक्काले चदुपाणा इंदियबलमाउआणपाणो सो ववहारा जीवो य णिच्छयणयदो दु चेदणा।

अर्थ– जिसके तीन काल में चार प्राण- इन्द्रिय, बल, आयु, श्वास निकालना और श्वास लेना (होते हैं) - वह व्यवहार (नय) से जीव (होता है) और (शुद्ध) निश्चयनय से (जीव) निस्सन्देह चैतन्य (होता है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

4. उवओगो दुवियप्पो दंसणणाणं च दंसणं चदुधा।
चक्खु अचक्खू ओही दंसणमध केवलं णेयं।।

उवओगो	(उवओग) 1/1	उपयोग
दुवियप्पो	{[(दु)वि-(वियप्प)1/1] वि}	दो भेद वाला
दंसणणाणं	[(दंसण)-(णाण) 1/1]	दर्शन (उपयोग), ज्ञान (उपयोग)
च	अव्यय	और
दंसणं	(दंसण) 1/1	दर्शन
चदुधा	अव्यय	चार प्रकार का
*चक्खु (मूलशब्द)	(चक्खु) 1/1	चक्षु
अचक्खू	(अचक्खु) 1/1	अचक्षु
ओही	(ओहि) 1/1	अवधि
दंसणमध	[(दंसणं)+(अध)]	
	दंसणं (दंसण) 1/1	दर्शन,
	अध (अ) = इसके बाद	इसके बाद
केवलं	(केवल) 1/1	केवल
णेयं	(णेय) विधिकृ 1/1 अनि	समझा जाना चाहिये

अन्वय– उवओगो दुवियप्पो दंसणणाणं च दंसणं चदुधा चक्खु अचक्खू ओही दंसणं अध केवलं णेयं।

अर्थ– उपयोग दो भेदवाला (है)- 1. दर्शन (उपयोग) और 2. ज्ञान (उपयोग)। दर्शन (उपयोग) चार प्रकार का (होता है)- 1. चक्षु (दर्शनोपयोग) 2. अचक्षु (दर्शनोपयोग) 3. अवधि (दर्शनोपयोग) और इसके बाद 4. केवल (दर्शनोपयोग) समझा जाना चाहिये।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है।

(पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

5. णाणं अट्ठवियप्पं मदिसुदिओही अणाणणाणाणि।
मणपज्जयकेवलमवि पच्चक्खपरोक्खभेयं च।।

णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
अट्ठवियप्पं	{[(अट्ठ) वि-(वियप्प) 1/1] वि}	आठ भेदवाला
मदिसुदिओही	[(मदि)-(सुदि)-(ओहि) 1/1]	मति, श्रुति, अवधि
अणाणणाणाणि	{[(अणाण) वि-(णाण) 1/2] वि}	अज्ञानरूप, ज्ञानरूप
मणपज्जयकेवलमवि	[(मणपज्जयकेवलं)+(अवि)]	
	[(मणपज्जय)-(केवल) 1/1]	मनःपर्यय, केवल
	अवि (अ) = ही	ही
पच्चक्खपरोक्खभेयं	{[(पच्चक्ख)-(परोक्ख)-(भेअ) 1/1] वि}	प्रत्यक्ष, परोक्ष भेदवाला
च	अव्यय	और

अन्वय–णाणं अट्ठवियप्पं मदिसुदिओही अणाणणाणाणि मणपज्जय–केवलं अवि पच्चक्खपरोक्खभेयं च।

अर्थ– ज्ञान (अध्यात्म दृष्टि से) आठ भेदवाला (होता है)- मति, श्रुति, अवधि (ये तीनों मिथ्यात्व अवस्था में) अज्ञानरूप (कहे गये हैं) (और) (ये तीनों सम्यक्त्व अवस्था में) ज्ञानरूप (कहे गये हैं)। मनःपर्यय और केवल (ज्ञानरूप) ही (होते हैं)। (ये ज्ञान तार्किक दृष्टि से) प्रत्यक्ष और परोक्ष भेदवाले (हैं) (अवधि, मनःपर्यय और केवलज्ञान प्रत्यक्ष हैं तथा मति, श्रुतिज्ञान परोक्ष हैं)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

6. अट्ठ चदु णाण दंसण सामण्णं जीवलक्खणं भणियं।
ववहारा सुद्धणया सुद्धं पुण दंसणं णाणं।।

अट्ठ	(अट्ठ) 1/2 वि	आठ
*चदु (मूलशब्द)	(चदु) 1/2 वि	चार
*णाण (मूलशब्द)	(णाण) 1/2 वि	ज्ञानरूप
*दंसण (मूलशब्द)	(दंसण) 1/2 वि	दर्शनरूप
सामण्णं	(सामण्ण) 1/1 वि	साधारण
जीवलक्खणं	[(जीव)-(लक्खण) 1/1]	जीव का लक्षण
भणियं	(भण→भणिय) भूकृ 1/1	कहा गया है
ववहारा	(ववहार) 5/1	व्यवहार (नय) से
सुद्धणया	(सुद्धणय) 5/1	शुद्धनय से
सुद्धं	(सुद्ध) 1/1 वि	शुद्ध
पुण	अव्यय	और
दंसणं	(दंसण) 1/1	दर्शन
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान

अन्वय– ववहारा जीवलक्खणं सामण्णं अट्ठ णाण चदु दंसण भणियं सुद्धणया सुद्धं दंसणं पुण णाणं।

अर्थ– व्यवहार (नय) से जीव का साधारण लक्षण आठ ज्ञानरूप और चार दर्शनरूप कहा गया है। शुद्धनय से शुद्ध दर्शन और (शुद्ध) ज्ञान (जीव का लक्षण कहा गया है)।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

7. **वण्ण रस पंच गंधा दो फासा अट्ठ णिच्छया जीवे।**
णो संति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति बंधादो।।

*वण्ण (मूलशब्द)	(वण्ण) 1/2	वर्ण
*रस (मूलशब्द)	(रस) 1/2	रस
पंच	(पंच) 1/2 वि	पाँच
गंधा	(गंध) 1/2	गंध
दो	(दो) 1/2 वि	दो
फासा	(फास) 1/2	स्पर्श
अट्ठ	(अट्ठ) 1/2 वि	आठ
णिच्छया	(णिच्छय) 5/1	निश्चय (नय) से
जीवे	(जीव) 7/1	जीव में
णो	अव्यय	नहीं
संति	(अस) व 3/2 अक	होते हैं
*अमुत्ति (मूलशब्द)	(अमुत्ति) 1/1 वि	अमूर्तिक
तदो	अव्यय	उस कारण से
ववहारा	(ववहार) 5/1	व्यवहार (नय) से
*मुत्ति (मूलशब्द)	(मुत्ति) 1/1	मूर्तिक
बंधादो	(बंध) 5/1	बंध से

अन्वय– वण्ण रस पंच गंधा दो फासा अट्ठ णिच्छया जीवे णो संति तदो अमुत्ति ववहारा बंधादो मुत्ति।

अर्थ– वर्ण (पाँच), रस पाँच, गंध दो, स्पर्श आठ (ये) (शुद्ध) निश्चय (नय) से जीव में नहीं होते हैं उस कारण से (जीव) अमूर्तिक है। व्यवहार (नय) से (जीव) (कर्मपुद्गल के) बंध से मूर्तिक (होता है)।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

8. पुग्गलकम्मादीणं कत्ता ववहारदो दु णिच्छयदो।
चेदणकम्माणादा सुद्धणया सुद्धभावाणं।।

पुग्गलकम्मादीणं	[(पुग्गलकम्म)+(आदीणं)]	
	[(पुग्गल)-(कम्म)-(आदि) 6/2]	पुद्गल कर्म आदि का
कत्ता	(कत्तु) 1/1 वि	कर्ता
ववहारदो	(ववहार) 5/1 पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	व्यवहार (नय) से
दु	अव्यय	और
णिच्छयदो	(णिच्छय) 5/1 पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	निश्चय (नय) से
चेदणकम्माणादा	[(चेदणकम्माण)+(आदा)]	
	[(चेदण)-(कम्म) 6/2]	भावकर्मों का
	आदा (आद) 1/1	आत्मा
सुद्धणया	(सुद्धणय) 5/1	शुद्धनय से
सुद्धभावाणं	(सुद्धभाव) 6/2	शुद्धभावों का

अन्वय–आदा ववहारदो पुग्गलकम्मादीणं कत्ता दु णिच्छयदो चेदणकम्माण सुद्धणया सुद्धभावाणं।

अर्थ– आत्मा व्यवहार (नय) से पुद्गल कर्म आदि का कर्ता है और (अशुद्ध) निश्चय (नय) से (राग-द्वेष आदि अशुद्ध) भावकर्मों का (तथा) शुद्धनय से शुद्धभावों का (कर्ता) है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

9. ववहारा सुहदुक्खं पुग्गलकम्मप्फलं पभुंजेदि।
आदा णिच्छयणयदो चेदणभावं खु आदस्स।।

ववहारा	(ववहार) 5/1	व्यवहारनय से
सुहदुक्खं	[(सुह)-(दुक्ख) 2/1]	सुख-दुःख को
पुग्गलकम्मप्फलं	[(पुग्गल)-(कम्म) -(प्फल) 2/1]	पुद्गल कर्मों के फल को
पभुंजेदि	(पभुंज) व 3/1 सक	भोगता है
आदा	(आद) 1/1	आत्मा
णिच्छयणयदो	(णिच्छयणय) 5/1 पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	निश्चयनय से
चेदणभावं	[(चेदण)-(भाव) 2/1]	चेतन भाव को
खु	अव्यय	ही
आदस्स	(आद) 6/1	निज के

अन्वय– आदा ववहारा पुग्गलकम्मप्फलं सुहदुक्खं पभुंजेदि णिच्छयणयदो आदस्स खु चेदणभावं।

अर्थ– आत्मा व्यवहारनय से पुद्गल कर्मों के फल सुख-दुःख को भोगता है। (अशुद्ध) निश्चयनय से निज के ही चेतन (राग-द्वेष आदि अशुद्ध) भाव को (भोगता है)। (शुद्धनय से शुद्ध भावों को भोगता है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

10. अणुगुरुदेहपमाणो उवसंहारप्पसप्पदो चेदा।
असमुहदो ववहारा णिच्छयणयदो असंखदेसो वा।।

अणुगुरुदेहपमाणो	{[(अणु) वि -(गुरु) वि -(देह)-(पमाण) 1/1] वि}	छोटे-बड़े शरीर प्रमाणवाली
उवसंहारप्पसप्पदो	[(उवसंहार)-(प्पसप्प) 5/1] पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	संकोच-विस्तार से
चेदा	(चेद) 1/1	आत्मा
असमुहदो	(अ-समुहद) 1/1 वि	समुद्घात को अप्राप्त
ववहारा	(ववहार) 5/1	व्यवहार (नय) से
णिच्छयणयदो	(णिच्छयणय) 5/1 पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	निश्चयनय से
असंखदेसो	{[(असंख)-(देस) 1/1] वि}	असंख्यात प्रदेशवाली
वा	अव्यय	तथा

अन्वय– असमुहदो चेदा ववहारा अणुगुरुदेहपमाणो उवसंहारप्पसप्पदो वा णिच्छयणयदो असंखदेसो।

अर्थ– समुद्घात को अप्राप्त आत्मा व्यवहार (नय) से संकोच-विस्तार (गुण) से छोटे-बड़े शरीर प्रमाणवाली (होती है) तथा (शुद्ध) निश्चयनय से (आत्मा) असंख्यात प्रदेशवाली (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

11. पुढविजलतेयवाऊ वणप्फदी विविहथावरेइंदी।
विगतिगचदुपंचक्खा तसजीवा होंति संखादी।।

पुढविजलतेयवाऊ	[(पुढवि)-(जल)-(तेय) -(वाउ) 1/1]	पृथ्वी, जल, तेज, वायु
वणप्फदी	(वणप्फदि) 1/1	वनस्पति
विविहथावरेइंदी	[(विविहथावर)+(एअ)+(इंदी)]	
	[(विविह) वि-(थावर) -(एअ) वि-(इंदि) 1/1]	अनेक प्रकार के स्थावर एक इन्द्रिय
विगतिगचदुपंचक्खा	[(विगतिगचदुपंच)+(अक्खा)]	
	[(विग) वि-(तिग) वि-(चदु) वि-(पंच) वि-(अक्ख) 5/1]	दो (इन्द्रिय) से गमन करनेवाले, तीन (इन्द्रिय) से गमन करनेवाले, चार, और पाँच इन्द्रियों से (गमन करनेवाले)
तसजीवा	(तसजीव) 1/2	त्रस जीव
होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं
संखादी	[(संख)+(आदी)]	
	[(संख)-(आदि) 1/2]	शंख आदि

अन्वय- विविहथावरेइंदी पुढविजलतेयवाऊ वणप्फदी विगतिग-चदुपंचक्खा तसजीवा होंति संखादी।

अर्थ- अनेक प्रकार के स्थावर एक इन्द्रिय (जीव होते हैं) (जैसे) पृथ्वी, जल, तेज, वायु, (और) वनस्पति। दो (इन्द्रिय) से गमन करनेवाले, तीन (इन्द्रिय) से गमन करनेवाले, चार (और) पाँच इन्द्रियों से (गमन करनेवाले) त्रस जीव होते हैं (जैसे) शंख आदि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

12. समणा अमणा णेया पंचिंदिय णिम्मणा परे सव्वे।
बादरसुहमेइंदी सव्वे पज्जत्त इदरा य।।

समणा	(समण) 1/2 वि	मनवाले
अमणा	(अमण) 1/2 वि	अमनवाले
णेया	(णेय) विधिकृ 1/2 अनि	समझे जाने चाहिये
*पंचिंदिय (मूलशब्द)	[(पंच)+(इंदिय)]	
	[(पंच) वि-(इंदिय) 1/2]	पाँच इन्द्रिय
णिम्मणा	(णिम्मण) 1/2 वि	मन से रहित
परे	(पर) 1/2 वि	अन्य
सव्वे	(सव्व) 1/2 सवि	सभी
बादरसुहमेइंदी	[(बादरसुहम)+(एअ)+(इंदी)]	
	[(बादर) वि-(सुहम) वि	बादर, सूक्ष्म
	-(एअ) वि-(इंदि) 1/1]	एक इन्द्रिय
सव्वे	(सव्व) 1/2 सवि	सभी
*पज्जत्त (मूलशब्द)	(पज्जत्त) 1/2 वि	पर्याप्ति से युक्त
इदरा	(इदर) 1/2 वि	विपरीत
य	अव्यय	और

अन्वय- पंचिंदिय समणा अमणा णेया परे सव्वे णिम्मणा बादरसुहमेइंदी सव्वे पज्जत्त य इदरा।

अर्थ- पाँच इन्द्रिय (जीव) मनवाले, (और) अमनवाले समझे जाने चाहिये। अन्य सभी (चार इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, दो इन्द्रिय) मन से रहित (होते हैं) (और) एक इन्द्रिय (जीव) बादर (और) सूक्ष्म (होते हैं)। सभी पर्याप्ति से युक्त और (इसके) विपरीत (अपर्याप्ति से युक्त होते हैं)।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

13. मग्गणगुणठाणेहि य चउदसहि हवंति तह असुद्धणया।
विण्णेया संसारी सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया।।

मग्गणगुणठाणेहि	[(मग्गण)-(गुणठाण) 3/2]	मार्गणास्थान, गुणस्थान से युक्त
य	अव्यय	और
चउदसहि	(चउदस) 3/2 वि	चौदह
हवंति	(हव) व 3/2 अक	होते हैं
तह	अव्यय	पादपूर्ति
असुद्धणया	(असुद्धणय) 5/1 वि	अशुद्धनय से
विण्णेया	(विण्णेय) विधिकृ 1/2 अनि	समझे जाने चाहिये
*संसारी (मूल शब्द)	(संसारी) 1/2 वि	संसारी
सव्वे	(सव्व) 1/2 सवि	सभी
सुद्धा	(सुद्ध) 1/2 वि	शुद्ध
हु	अव्यय	परन्तु
सुद्धणया	(सुद्धणय) 5/1	शुद्धनय से

अन्वय- असुद्धणया चउदसहि मग्गणगुणठाणेहि य संसारी हवंति तह हु सुद्धणया सव्वे सुद्धा विण्णेया।

अर्थ- अशुद्धनय से चौदह मार्गणास्थान (अन्वेषण स्थान) और (चौदह) गुणस्थान (विकास स्थान) से युक्त (जीव) संसारी होते हैं, परन्तु शुद्धनय से सभी शुद्ध समझे जाने चाहिये।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

14. णिक्कम्मा अट्ठगुणा किंचूणा चरमदेहदो सिद्धा।
लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवएहिं संजुत्ता।।

णिक्कम्मा	(णिक्कम्म) 1/2 वि	कर्मो से मुक्त
अट्ठगुणा	{[(अट्ठ) वि-(गुण) 1/2] वि}	आठ गुणवाले
किंचूणा	(किंचूण) 1/2 वि	कुछ कम
चरमदेहदो	[(चरम) वि-(देह) 5/1] पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	अंतिम शरीर से
सिद्धा	(सिद्ध) 1/2 वि	सिद्ध
लोयग्गठिदा	[(लोय)+(अग्गठिदा)] [(लोय)-(अग्ग)- (ठिद) भूकृ 1/2 अनि]	लोक के अग्रभाग में अवस्थित
णिच्चा	(णिच्च) 1/2 वि	नित्य
उप्पादवएहिं	[(उप्पाद)-(वअ) 3/2]	उत्पाद व्यय से
संजुत्ता	(संजुत्त) 1/2 वि	संयुक्त

अन्वय- णिक्कम्मा सिद्धा अट्ठगुणा चरमदेहदो किंचूणा लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवएहिं संजुत्ता।

अर्थ- कर्मों से मुक्त सिद्ध आठ गुणवाले, अंतिम शरीर से कुछ कम, लोक के अग्रभाग में अवस्थित, नित्य, उत्पाद व्यय से संयुक्त (होते हैं)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

15. अज्जीवो पुण णेओ पुग्गलधम्मो अधम्म आयासं।
कालो पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु।।

अज्जीवो	(अज्जीव) 1/1	अजीव
पुण	अव्यय	(जीव के) विपरीत
णेओ	(णेअ) विधिकृ 1/1 अनि	जाना जाना चाहिये
पुग्गलधम्मो	[(पुग्गल)-(धम्म) 1/1]	पुद्गल, धर्म
*अधम्म (मूल शब्द)	(अधम्म) 1/1	अधर्म
आयासं	(आयास) 1/1	आकाश
कालो	(काल) 1/1	काल
*पुग्गल (मूल शब्द)	(पुग्गल) 1/1	पुद्गल
मुत्तो	(मुत्त) 1/1 वि	मूर्तिक
रूवादिगुणो	[(रूव)+(आदिगुणो)] {[(रूव)-(आदि)-(गुण) 1/1] वि}	रूपादि गुणवाला
*अमुत्ति (मूल शब्द)	(अमुत्ति) 1/1 वि	अमूर्तिक
सेसा	(सेस) 1/2 वि	शेष
दु	अव्यय	किन्तु

अन्वय– पुण अज्जीवो पुग्गलधम्मो अधम्म आयासं कालो णेओ पुग्गल रूवादिगुणो मुत्तो दु सेसा अमुत्ति।

अर्थ– (जीव के) विपरीत अजीव (द्रव्य)-पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश (और), काल जाना जाना चाहिये। पुद्गल रूपादि गुणवाला (होता है)(अतः)मूर्तिक (होता है) किन्तु शेष (धर्म, अधर्म, आकाश और काल) अमूर्तिक (होते हैं)।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

16. सद्दो बंधो सुहुमो थूलो संठाण भेद तम छाया।
उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया।।

सद्दो	(सद्द) 1/1	शब्द
बंधो	(बंध) 1/1	बंध
सुहुमो	(सुहुम) 1/1 वि	सूक्ष्म
थूलो	(थूल) 1/1 वि	स्थूल
*संठाण (मूलशब्द)	(संठाण) 1/1	संस्थान
*भेद (मूलशब्द)	(भेद) 1/1	भेद
*तम (मूलशब्द)	(तम) 1/1	तम
छाया	(छाया) 1/1	छाया
उज्जोदादवसहिया	[(उज्जोद)+(आदवसहिया)]	
	[(उज्जोद)-(आदव)-(सहिय) 1/2 वि]	उद्योत, आतप सहित
पुग्गलदव्वस्स	[(पुग्गल)-(दव्व) 6/1]	पुद्गल द्रव्य की
पज्जाया	(पज्जाय) 1/2	पर्यायें

अन्वय- सद्दो बंधो सुहुमो थूलो संठाण भेद तम छाया उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया।

अर्थ- शब्द, बंध (बंधन), सूक्ष्म, स्थूल, संस्थान (आकृति), भेद (टुकड़े-टुकड़े होना), तम (अंधकार), छाया, उद्योत (प्रकाश), आतप (सूर्य, अग्नि आदि की गर्मी) सहित- (ये सब) पुद्गल द्रव्य की पर्यायें (हैं)।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

17. गइपरिणयाण धम्मो पुग्गलजीवाण गमणसहयारी।
तोयं जह मच्छाणं अच्छंता णेव सो णेई।।

गइपरिणयाण	[(गइ)-(परिणय) भूकृ 4/2 अनि]	गति में परिवर्तित के लिए
धम्मो	(धम्म) 1/1	धर्म
पुग्गलजीवाण	[(पुग्गल)-(जीव) 4/2]	पुद्गल और जीवों के लिए
गमणसहयारी	[(गमण)-(सहयारि) 1/1 वि]	गमन में सहकारी
तोयं	(तोय) 1/1	जल
जह	अव्यय	जैसे
मच्छाणं	(मच्छ) 4/2	मछलियों के लिए
अच्छंता	(अच्छ) वकृ 2/2	ठहरती हुई को
णेव	अव्यय	नहीं
सो	(त) 1/1 सवि	वह
णेई[1]	(णी) व 3/1 सक	गति कराना

अन्वय- गइपरिणयाण पुग्गलजीवाण धम्मो गमणसहयारी जह मच्छाणं तोयं सो अच्छंता णेई णेव।

अर्थ- गति में परिवर्तित पुद्गल और जीवों के लिए धर्म (द्रव्य) गमन में सहकारी (होता है) जैसे मछलियों के लिए जल। (किन्तु) वह (धर्म द्रव्य) ठहरती हुई (मछलियों) को गति नहीं कराता (अर्थात् गति में प्रेरक नहीं होता)।

---

1. छन्द की मात्रा हेतु 'इ' का 'ई' किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

18. ठाणजुदाण अधम्मो पुग्गलजीवाण ठाणसहयारी।
छाया जह पहियाणं गच्छंता णेव सो धरई।।

ठाणजुदाण	[(ठाण)-(जुद) भूकृ 4/2 अनि]	स्थितियुक्त के लिए (ठहरे हुओं के लिए)
अधम्मो	(अधम्म) 1/1	अधर्म
पुग्गलजीवाण	[(पुग्गल)-(जीव) 4/2]	पुद्गल और जीवों के लिए
ठाणसहयारी	[(ठाण)-(सहयारि)1/1 वि]	स्थिति में सहकारी
छाया	(छाया) 1/1	छाया
जह	अव्यय	जैसे
पहियाणं	(पहिय) 4/2	पथिकों के लिए
गच्छंता	(गच्छ) वकृ 2/2	चलते हुओं को
णेव	अव्यय	नहीं
सो	(त) 1/1 सवि	वह
धरई[1]	(धर) व 3/1 सक	ठहराता है

अन्वय- ठाणजुदाण पुग्गलजीवाण अधम्मो ठाणसहयारी जह पहियाणं छाया सो गच्छंता धरई णेव।

अर्थ- स्थितियुक्त पुद्गल और जीवों के लिए (अर्थात् ठहरे हुओं के लिए) अधर्म (द्रव्य) स्थिति (ठहरने) में सहकारी होता है जैसे पथिकों के लिए छाया। (किन्तु) वह (अधर्म द्रव्य) चलते हुओं (पथिकों) को ठहराता नहीं है (अर्थात् ठहराने में प्रेरक नहीं होता)।

---

1. छन्द की मात्रा हेतु 'इ' का 'ई' किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

19. अवगासदाणजोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं।
जेण्हं लोगागासं अल्लोगागासमिदि दुविहं।।

अवगासदाणजोग्गं	[(अवगास)-(दाण) -(जोग्ग) 1/1 वि]	अवकाश (जगह) देने में योग्य (समर्थ)
जीवादीणं	[(जीव)+(आदीणं)] [(जीव)-(आदि) 4/2]	जीव आदि (द्रव्यों) के लिए
वियाण	(वियाण) विधि 2/1 सक	जानो
आयासं	(आयास) 2/1	आकाश को
जेण्हं	जे (अ) =	पादपूर्ति
	ण्हं (अ) =	वाक्यालंकार
लोगागासं	(लोगागास) 1/1	लोकाकाश
अल्लोगागासमिदि	[(अल्लोगागासं)+(इदि)]	
	अल्लोगागासं (अल्लोगागास)1/1	अलोकाकाश
	इदि (अ) = और	और
दुविहं	(दुविह) 1/1 वि	दो प्रकार का

अन्वय– जीवादीणं अवगासदाणजोग्गं आयासं वियाण जेण्हं दुविहं लोगागासं अल्लोगागासमिदि।

अर्थ– (जो) जीव आदि (द्रव्यों) के लिए अवकाश (जगह) देने में योग्य (समर्थ) (है) (उस) आकाश (द्रव्य) को जानो। (वह) (आकाश द्रव्य) दो प्रकार का है- लोकाकाश और अलोकाकाश।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

20. धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा य संति जावदिये।
आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्तो।।

धम्माधम्मा	[(धम्म)+(अधम्मा)]	
	[(धम्म)-(अधम्म) 1/2]	धर्म, अधर्म
कालो	(काल)1/1	काल
पुग्गलजीवा	[(पुग्गल)-(जीव) 1/2]	पुद्गल, जीव
य	अव्यय	और
संति	(अस) व 3/2 अक	रहते हैं
जावदिये	(जावदिय) 7/1 वि	जितने
आयासे	(आयास) 7/1	आकाश में
सो	(त) 1/1 सवि	वह
लोगो	(लोग) 1/1	लोक
तत्तो	अव्यय	इसलिए
परदो	अव्यय	दूसरी तरफ
अलोगुत्तो	[(अलोग)+(उत्तो)]	
	(अलोग) 1/1	अलोक
	(उत्त) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया है

अन्वय– धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा य जावदिये आयासे संति सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्तो।

अर्थ– धर्म, अधर्म, काल, पुद्गल और जीव (द्रव्य) जितने आकाश में रहते हैं वह लोक (लोकाकाश) (है)। इसलिए दूसरी तरफ अलोक (अलोकाकाश) कहा गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

21. दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो।
परिणामादी लक्खो वट्टणलक्खो य परमट्ठो।।

दव्वपरिवट्टरूवो	[(दव्व)-(परिवट्ट)-(रूव) 1/1 वि]	द्रव्य के बदलाव से युक्त
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
सो	(त) 1/1 सवि	वह
कालो	(काल) 1/1	काल
हवेइ	(हव) व 3/1 अक	होता है
ववहारो	(ववहार) 1/1	व्यवहार
परिणामादी	[(परिणाम)+(आदी)] [(परिणाम)-(आदि) 1/1]	परिवर्तन आदि
लक्खो	(लक्ख) विधिकृ 1/1 अनि	पहचानने योग्य
वट्टणलक्खो	[(वट्टण)-(लक्ख) 1/1 वि]	परिवर्तन का प्रकाशक
य	अव्यय	परन्तु
परमट्ठो	(परमट्ठ) 1/1	परमार्थ (काल)

अन्वय– जो लक्खो दव्वपरिवट्टरूवो परिणामादी सो ववहारो कालो हवेइ य वट्टणलक्खो परमट्ठो।

अर्थ– जो पहिचानने योग्य द्रव्य के बदलाव से युक्त परिवर्तन आदि होता है वह व्यवहार काल (है) परन्तु परिवर्तन का प्रकाशक परमार्थ (काल) (होता है)। (परिवर्तन 'समय' में होता है अतः उसका प्रकाशक काल द्रव्य ही परमार्थ काल है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

22 लोयायासपदेसे इक्किक्के जे ठिया हु इक्किक्का।
रयणाणं रासी इव ते कालाणू असंखदव्वाणि।।

लोयायासपदेसे	[(लोयायास)-(पदेस) 7/1]	लोकाकाश के प्रदेश पर
इक्किक्के	(इक्किक्क) 7/1 वि	एक-एक
जे	(ज) 1/2 सवि	जो
ठिया	(ठिय) भूकृ 1/2 अनि	स्थित
हु	अव्यय	निश्चय ही
इक्किक्का	(इक्किक्क) 1/2 वि	एक-एक
रयणाणं	(रयण) 6/2	रत्नों के
रासी	(रासि) 1/1	ढेर
इव	अव्यय	समान
ते	(त) 1/2 सवि	वे
कालाणू	(कालाणु) 1/2	कालाणु
असंखदव्वाणि	[(असंख) वि-(दव्व) 1/2]	असंख्यात द्रव्य

अन्वय– लोयायासपदेसे इक्किक्के जे इक्किक्का कालाणू ठिया ते रयणाणं रासी इव हु असंखदव्वाणि।

अर्थ– लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर जो एक-एक कालाणु स्थित हैं वे (कालाणु) रत्नों के ढेर के समान निश्चय ही असंख्यात द्रव्य (हैं)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

23. एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवप्पभेददो दव्वं।
उत्तं कालविजुत्तं णादव्वा पंच अत्थिकाया दु।।

एवं	अव्यय	इस प्रकार
छब्भेयमिदं	[(छब्भेयं)+(इदं)]	
	छब्भेयं (छब्भेय) 1/1	छह प्रकार
	इदं (इम) 1/1 सवि	यह
जीवाजीवप्पभेददो	[(जीव)+(अजीवप्पभेद)]	
	[(जीव)-(अजीव)-	जीव, अजीव के भेद
	(प्पभेद) 5/1]	से
	पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	
दव्वं	(दव्व) 1/1	द्रव्य
उत्तं	(उत्त) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया है
कालविजुत्तं	[(काल)-(विजुत्त)	काल (द्रव्य)
	भूकृ 1/1 अनि]	से रहित
णादव्वा	(णा) विधिकृ 1/2	समझे जाने चाहिये
पंच	(पंच) 1/2 वि	पाँच
अत्थिकाया	(अत्थिकाय) 1/2	अस्तिकाय
दु	अव्यय	परन्तु

अन्वय– एवं इदं दव्वं जीवाजीवप्पभेददो छब्भेयं उत्तं दु कालविजुत्तं पंच अत्थिकाया णादव्वा।

अर्थ– इस प्रकार यह द्रव्य- जीव, अजीव के भेद से छह प्रकार (का) कहा गया है। परन्तु काल (द्रव्य) से रहित पाँच अस्तिकाय समझे जाने चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

24. संति जदो तेणेदे अत्थित्ति भणंति जिणवरा जम्हा।
काया इव बहुदेसा तम्हा काया य अत्थिकाया य।।

संति	(अस) व 3/2 अक	विद्यमान हैं
जदो	अव्यय	चूँकि
तेणेदे	[(तेण)+(एदे)]	
	तेण (अ) = इसलिए	इसलिए
	एदे (एद) 1/2 सवि	ये
अत्थित्ति	[(अत्थि)+(इति)]	
	अत्थि (अ) = अस्ति	अस्ति
	इति (अ) = ही	ही
भणंति	(भण) व 3/2 सक	कहते हैं
जिणवरा	(जिणवर) 1/2	जिनवर
जम्हा	अव्यय	चूँकि
काया	(काया) 1/1	देह
इव	अव्यय	की तरह
बहुदेसा	(बहुदेस) 1/2 वि	बहुत प्रदेशी
तम्हा	अव्यय	इसलिये
काया	(काय) 1/2	काय
य	अव्यय	भी
अत्थिकाया	(अत्थिकाय) 1/2	अस्तिकाय
य	अव्यय	और

अन्वय– जदो एदे संति तेण जिणवरा अत्थित्ति भणंति जम्हा काया इव बहुदेसा तम्हा काया य अत्थिकाया य।

अर्थ– चूँकि ये (द्रव्य) विद्यमान हैं इसलिए जिनवर (इनको) 'अस्ति' ही कहते हैं। चूँकि (ये द्रव्य) देह की तरह बहुत प्रदेशी (है) इसलिये 'काय' भी (कहे जाते हैं)। और (ये द्रव्य अस्ति और काय संयुक्तरूप से) अस्तिकाय (कहे गये हैं)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

25. होंति असंखा जीवे धम्माधम्मे अणंत आयासे।
मुत्ते तिविह पदेसा कालस्सेगो ण तेण सो काओ।।

होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं
असंखा	(असंख) 1/2 वि	असंख्यात
जीवे	(जीव) 7/1	जीव में
धम्माधम्मे	[(धम्म)+(अधम्मे)]	
	[(धम्म)-(अधम्म) 7/1]	धर्म और अधर्म में
*अणंत (मूल शब्द)	(अणंत) 1/2	अनंत
आयासे	(आयास) 7/1	आकाश में
मुत्ते	(मुत्त) 7/1 वि	मूर्त में
*तिविह (मूल शब्द)	(तिविह) 1/2 वि	तीन प्रकार के
पदेसा	(पदेस) 1/2	प्रदेश
कालस्सेगो	[(कालस्स)+(एगो)]	
	कालस्स (काल)[1] 6/1	काल का/में
	एगो (एग) 1/1 वि	एक
ण	अव्यय	नहीं
तेण	अव्यय	इसलिए
सो	(त) 1/1 सवि	वह
काओ	(काअ) 1/1	काय

अन्वय– जीवे धम्माधम्मे असंखा पदेसा होंति आयासे अणंत मुत्ते तिविह कालस्सेगो तेण सो काओ ण।

अर्थ– जीव (द्रव्य) में, धर्म तथा अधर्म (द्रव्य) में असंख्यात प्रदेश होते हैं। आकाश में अनंत (प्रदेश होते हैं)। मूर्त (पुद्गल) में तीन प्रकार के (संख्यात, असंख्यात, अनंत प्रदेश) (होते हैं)। काल का/में एक (प्रदेश होता है)। इसलिए वह 'काय' नहीं है।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

1. सप्तमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग। (हेम प्राकृत व्याकरण 3-134)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

26. एयपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि।
बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हु।।

एयपदेसो	{[(एय)-(पदेस) 1/1] वि}	एक प्रदेश
वि	अव्यय	भी
अणू	(अणु) 1/1	परमाणु
णाणाखंधप्पदेसदो	[(णाणा) वि-(खंध)-(प्पदेस) 5/1] पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	अनेक स्कंध प्रदेश से
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
बहुदेसो	(बहुदेस) 1/1 वि	बहुत प्रदेशी
उवयारा	(उवयार) 5/1	व्यवहार से
तेण	अव्यय	इसलिये
य	अव्यय	पादपूर्ति
काओ	(काअ) 1/1	काय
भणंति	(भण) व 3/2 सक	कहते हैं
*सव्वण्हु (मूल शब्द)	(सव्वण्हु) 1/1 वि	सर्वज्ञ देव

अन्वय– एयपदेसो अणू वि णाणाखंधप्पदेसदो बहुदेसो होदि तेण य सव्वण्हु उवयारा काओ भणंति ।

अर्थ– एक प्रदेश (पुद्गल) परमाणु भी अनेक स्कंध प्रदेश से बहुत प्रदेशी होता है। इसलिये सर्वज्ञ देव व्यवहार से (परमाणु को) काय कहते हैं।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

27. जावदियं आयासं अविभागीपुग्गलाणुवट्टीदं[1]।
तं खु पदेसं जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं।।

जावदियं	(जावदिय) 1/1 वि	जितना
आयासं	(अयास) 1/1	आकाश
अविभागी-	[(अविभागीपुग्गल)+(अणुवट्टीदं)]	
पुग्गलाणुवट्टीदं	[(अविभागी) वि-(पुग्गल)	अविभागी पुद्गल
	(अणु)-(वट्ट→वट्टिदं→वट्टीदं)	परमाणु द्वारा
	भूक 1/1]	आच्छादित
तं	(त) 2/1 सवि	उसको
खु	अव्यय	निश्चय ही
पदेसं	(पदेस) द्वि/1	प्रदेश
जाणे[2]	(जाण) विधि 2/1 सक	जानो
सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं	[(सव्व)+(अणुट्ठाणदाण)+	
	(अरिहं)]	
	[(सव्व)-(अणु)-(ट्ठाण)-	सब अणुओं को
	(दाण)-(अरिह) द्वि/1 वि]	स्थान देने में योग्य

अन्वय– जावदियं आयासं अविभागीपुग्गलाणुवट्टीदं तं खु सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं पदेसं जाणे।

अर्थ– जितना आकाश अविभागी पुद्गल परमाणु द्वारा आच्छादित (है) उसे निश्चय ही सब अणुओं को स्थान देने में योग्य प्रदेश जानो।

---

1. उड्ढं के स्थान पर वट्टीदं (वट्टिदं→वट्टीदं) पाठ होना चाहिए। छंद की मात्रा के लिये यहाँ दीर्घ किया गया है।
2. पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 679

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दूसरा अधिकार
(सात तत्त्व, नव पदार्थ का निरूपण)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

28. आसव बंधण संवर णिज्जर मोक्खो सपुण्णपावा जे।
जीवाजीवविसेसा ते वि समासेण पभणामो ।।

*आसव (मूल शब्द)	(आसव) 1/1	आस्रव
*बंधण (मूल शब्द)	(बंधण) 1/1	बंध
*संवर (मूल शब्द)	(संवर) 1/1	संवर
णिज्जर[1]	(णिज्जरा) 1/1	निर्जरा
मोक्खो	(मोक्ख) 1/1	मोक्ष
सपुण्णपावा	[(स) वि-(पुण्ण)-(पाव) 1/2]	पुण्य-पाप सहित
जे	(ज) 1/2 सवि	जो
जीवाजीवविसेसा	[(जीव)+(अजीवविसेसा)]	
	[(जीव)-(अजीव)-(विसेस) 1/2]	जीव और अजीव (द्रव्य) के भेद
ते	(त) 2/2 सवि	उनको
वि	अव्यय	भी
समासेण[2]	(समास) 3/1	संक्षेप में
पभणामो	(पभण) व 1/2 सक	कहते हैं

अन्वय– सपुण्णपावा आसव बंधण संवर णिज्जर मोक्खो जे जीवाजीवविसेसा ते वि समासेण पभणामो।

अर्थ– पुण्य-पाप सहित आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा (और) मोक्ष जो (पदार्थ) जीव और अजीव (द्रव्य) के भेद (हैं), उनको भी (हम) संक्षेप में कहते हैं।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

1. छंद की मात्रा की सुविधा के अनुसार दीर्घ स्वर को ह्रस्व किया गया है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 182)
2. सप्तमी विभक्ति के स्थान पर तृतीया विभक्ति का प्रयोग।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

29. आसवदि जेण कम्मं परिणामेणप्पणो स विण्णेओ।
भावासवो जिणुत्तो कम्मासवणं परो होदि।।

आसवदि	(आसव) व 3/1 सक	प्रवेश मिलता है
जेण	(ज) 3/1 सवि	जिससे
कम्मं	(कम्म) 2/1	कर्म को
परिणामेणप्पणो	[(परिणामेण)+(अप्पणो)]	
	परिणामेण (परिणाम) 3/1	भाव से
	अप्पणो (अप्प) 6/1	आत्मा के
स	(त) 1/1 सवि	वह
विण्णेओ	(विण्णेअ) विधिकृ 1/1 अनि	समझा जाना चाहिये
भावासवो	(भावासव) 1/1	भावास्रव
जिणुत्तो	[(जिण)+(उत्तो)]	
	[(जिण)-(उत्त) भूकृ 1/1 अनि]	जिनेन्द्र के द्वारा कहा हुआ
कम्मासवणं	[(कम्म)+(आसवणं)]	
	[(कम्म)-(आसवण) 1/1]	द्रव्यकर्म का प्रवेश
परो	(पर) 1/1 वि	भिन्न
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है

अन्वय– परिणामेणप्पणो जेण कम्मं आसवदि स जिणुत्तो भावासवो विण्णेओ कम्मासवणं परो होदि।

अर्थ–आत्मा के जिस भाव से कर्म को प्रवेश मिलता है वह जिनेन्द्र के द्वारा कहा हुआ भावास्रव समझा जाना चाहिये। (जो) द्रव्यकर्म का प्रवेश (द्रव्यास्रव) होता है (वह) भिन्न (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

30. मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोधादओऽथ विण्णेया।
पण पण पणदस तिय चदु कमसो भेदा दु पुव्वस्स।।

मिच्छत्ताविरदिपमाद-	[(मिच्छत्त)+(अविरदिपमादजोगकोध)+	
जोगकोधादओऽथ	(आदओ)+(अथ)]	
मिच्छत्ताविरदिपमाद-	[(मिच्छत्त)-(अविरदि)-	मिथ्यात्व, अविरति
जोगकोधादओऽथ	(पमाद)-(जोग)-(कोध)-	प्रमाद, योग, क्रोध
	(आदि) 1/2]	(कषाय) आदि
	अथ (अ) = अब	अब
विण्णेया	(विण्णेय) विधिकृ 1/2 अनि	समझे जाने चाहिये
पण	(पण) 1/2 वि	पाँच
पण	(पण) 1/2 वि	पाँच
पणदस	(पणदस) 1/2 वि	पन्द्रह
*तिय (मूल शब्द)	(तिय) 1/2 वि 'य' स्वार्थिक	तीन
*चदु (मूल शब्द)	(चदु) 1/2 वि	चार
कमसो	अव्यय	क्रम से
भेदा	(भेद) 1/2	भेद
दु	अव्यय	और
पुव्वस्स	(पुव्व) 6/1 वि	पहले के

अन्वय– अथ पुव्वस्स मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोधादओ भेदा विण्णेया कमसो पण पण पणदस तिय दु चदु।

अर्थ– अब पहले (भावास्रव) के मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, योग, क्रोध (कषाय) आदि भेद समझे जाने चाहिये। (वे) (मिथ्यात्व आदि) क्रम से पाँच, पाँच, पन्द्रह, तीन और चार (हैं)।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है।

(पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

31. णाणावरणादीणं जोग्गं जं पुग्गलं समासवदि।
दव्वासवो स णेओ अणेयभेओ जिणक्खादो ।।

णाणावरणादीणं	[(णाणावरण)+(आदीणं)]	
	[(णाणावरण)-(आदि) 6/2]	ज्ञानावरणादि (कर्मों) के
जोग्गं	(जोग्ग) 1/1 वि	योग्य
जं	(ज) 1/1 सवि	जो
पुग्गलं	(पुग्गल) 1/1	पुद्गल
समासवदि	[(सम)+(आसव)]	
	सम (अ) = साथ-साथ	साथ-साथ
	(आसव) व 3/1 सक	आता है
दव्वासवो	(दव्वासव) 1/1	द्रव्यास्रव
स	(त) 1/1 सवि	वह
णेओ	(णेअ) विधिकृ 1/1 अनि	समझा जाना चाहिये
अणेयभेओ	{[(अणेय)-(भेअ)1/1] वि}	अनेक भेदवाला
जिणक्खादो	[(जिण)-(अक्खाद)	जिनेन्द्रदेव के द्वारा
	भूकृ 1/1 अनि]	कहा गया है

अन्वय– णाणावरणादीणं जोग्गं जं पुग्गलं समासवदि स दव्वासवो णेओ जिणक्खादो अणेयभेओ।

अर्थ– ज्ञानावरणादि (कर्मों) के योग्य जो पुद्गल (भाव के) साथ-साथ आता है, वह द्रव्यास्रव समझा जाना चाहिये। (वह) जिनेन्द्रदेव के द्वारा अनेक भेदवाला कहा गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

32. बज्झदि कम्मं जेण दु चेदणभावेण भावबंधो सो।
कम्मादपदेसाणं अण्णोण्णपवेसणं इदरो।।

बज्झदि	(बज्झ) व कर्म 3/1 सक अनि	बांधा जाता है
कम्मं	(कम्म) 1/1	कर्म
जेण	(ज) 3/1 सवि	जिससे
दु	अव्यय	और
चेदणभावेण	[(चेदण)-(भाव) 3/1]	आत्मभाव (राग-द्वेषादि) से
भावबंधो	(भावबंध) 1/1	भावबंध
सो	(त) 1/1 सवि	वह
कम्मादपदेसाणं	[(कम्म)+(आदपदेसाणं)] [(कम्म)-(आद)-(पदेस) 6/2]	कर्म तथा आत्मा के प्रदेशों का
अण्णोण्णपवेसणं	[(अण्णोण्ण) वि -(पवेसण) 1/1]	परस्पर/आपस में प्रवेश
इदरो	(इदर) 1/1 वि	अन्य

अन्वय– जेण चेदणभावेण कम्मं बज्झदि सो भावबंधो दु कम्मादपदेसाणं अण्णोण्णपवेसणं इदरो।

अर्थ– जिस आत्मभाव (राग-द्वेषादि भाव) से कर्म बांधा जाता है वह भावबंध है और कर्म तथा आत्मा के प्रदेशों का परस्पर/आपस में प्रवेश (वह) अन्य (द्रव्यबंध है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

33. पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसभेदा दु चदुविधो बंधो।
जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुभागा कसायदो होंति।।

पयडिट्ठिदिअणुभाग-प्पदेसभेदा	[(पयडि)-(ट्ठिदि)-(अणुभाग)-(प्पदेस)-(भेद) 5/1]	प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश भेद से
दु	अव्यय	और
चदुविधो	(चदुविध) 1/1 वि	चार प्रकार का
बंधो	(बंध) 1/1	बंध
जोगा	(जोग) 5/1	योग से
पयडिपदेसा	[(पयडि)-(पदेस) 1/2]	प्रकृति और प्रदेश
ठिदिअणुभागा	[(ठिदि)-(अणुभाग) 1/2]	स्थिति और अनुभाग
कसायदो	(कसाय) 5/1 पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	कषाय से
होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं

अन्वय– पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसभेदा बंधो चदुविधो जोगा पयडिपदेसा दु कसायदो ठिदिअणुभागा होंति।

अर्थ– प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश भेद से बंध चार प्रकार का (है)। योग से प्रकृति और प्रदेश (बंध होते हैं) और कषाय से स्थिति और अनुभाग (बंध) होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

34. चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेदू।
सो भावसंवरो खलु दव्वासवरोहणे अण्णो।।

चेदणपरिणामो	[(चेदण)-(परिणाम) 1/1]	आत्मा का भाव
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
कम्मस्सासव-	[(कम्मस्स)+(आसवणिरोहणे)]	
णिरोहणे	कम्मस्स (कम्म) 6/1	कर्म के
	[(आसव)-(णिरोहण) 7/1]	आस्रव को रोकने में
हेदू	(हेदु) 1/1	कारण
सो	(त) 1/1 सवि	वह
भावसंवरो	(भावसंवर) 1/1	भावसंवर
खलु	अव्यय	अतः
दव्वासवरोहणे	[(दव्व)+(आसवरोहणे)]	
	[(दव्व)-(आसव)	द्रव्यास्रव को
	-(रोहण) 7/1]	रोकने में
अण्णो	(अण्ण) 1/1 सवि	दूसरा

अन्वय– चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेदू सो खलु भावसंवरो दव्वासवरोहणे अण्णो।

अर्थ– आत्मा का भाव जो कर्म के आस्रव को रोकने में कारण (है) वह भावसंवर (है)। (वह) द्रव्यास्रव को रोकने में (भी) (कारण) (होता है)। अतः दूसरा (द्रव्यसंवर) (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

35. वदसमिदीगुत्तीओ धम्माणुपेहा परीसहजओ य।
चारित्तं बहुभेया णायव्वा भावसंवरविसेसा।।

वदसमिदीगुत्तीओ	[(वद)-(समिदि)-(गुत्ति) 1/2]	व्रत-समिति-गुप्ति
धम्माणुपेहा	[(धम्म)-(अणुपेहा) 1/2]	धर्म-अनुप्रेक्षा
परीसहजओ	(परीसहजअ) 1/1	परीषह को जीतना
य	अव्यय	और
चारित्तं	(चारित्त) 1/1	चारित्र
बहुभेया	(बहुभेय) 1/2 वि	बहुत भेदवाले
णायव्वा	(णा) विधिकृ 1/2	समझे जाने चाहिये
भावसंवरविसेसा	[(भाव)-(संवर)-(विसेस) 1/2]	भावसंवर के भेद

अन्वय– वदसमिदीगुत्तीओ धम्माणुपेहा परीसहजओ य चारित्तं बहुभेया भावसंवरविसेसा णायव्वा।

अर्थ– व्रत-समिति-गुप्ति-धर्म-अनुप्रेक्षा-परीषह को जीतना और चारित्र-(ये सब) बहुत भेदवाले भावसंवर के भेद समझे जाने चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

36. जह कालेण तवेण य भुत्तरसं कम्मपुग्गलं जेण।
भावेण सडदि णेया तस्सडणं चेदि णिज्जरा दुविहा।।

जह कालेण	अव्यय	उचित समय आने पर
तवेण	(तव) 3/1	तप द्वारा
य	अव्यय	और
भुत्तरसं	[(भुत्त) भूकृ अनि-(रस) 1/1]	भोगा हुआ रस
कम्मपुग्गलं	[(कम्म)-(पुग्गल) 1/1]	कर्म पुद्गल
जेण	(ज) 3/1 सवि	जिससे
भावेण	(भाव) 3/1	भाव से
सडदि	(सड) व 3/1 अक	विलीन हो जाता है
णेया	(णेय) विधिकृ 1/1 अनि	समझी जानी चाहिये
तस्सडणं	(तस्सडण) 1/1	उसका नष्ट
चेदि	[(च)+(इदि)]	
	च (अ) = और	और
	इदि (अ) = अतः	अतः
*णिज्जरा(मूलशब्द)	(णिज्जरा) 1/1	निर्जरा
दुविहा	(दुविहा) 1/1 वि	दो प्रकार की

अन्वय– जेण भावेण भुत्तरसं सडदि य जह कालेण च तवेण कम्मपुग्गलं तस्सडणं इदि णिज्जरा दुविहा णेया।

अर्थ– (आत्मा के) जिस (वीतराग) भाव से (मिथ्यात्व अवस्था में) भोगा हुआ रस विलीन हो जाता है (वह) (भावनिर्जरा) (है) और उचित समय आने पर और तप द्वारा उस (आत्मा) का कर्मपुद्गल नष्ट (होता है) (वह) (द्रव्यनिर्जरा) (है)। अतः निर्जरा दो प्रकार की समझी जानी चाहिये।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

37. **सव्वस्स कम्मणो जो खयहेदू अप्पणो हु परिणामो।**
णेयो स भावमुक्खो दव्वविमुक्खो य कम्मपुहभावो ।।

सव्वस्स	(सव्व) 6/1 सवि	समस्त
कम्मणो	(कम्म) 6/1	कर्म के
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
खयहेदू	[(खय)-(हेदु) 1/1]	नाश का कारण
अप्पणो	(अप्प) 6/1	आत्मा का
हु	अव्यय	निश्चय ही
परिणामो	(परिणाम) 1/1	परिणाम
णेयो	(णेय) विधिकृ 1/1 अनि	समझा जाना चाहिये
स	(त) 1/1 सवि	वह
भावमुक्खो	[(भाव)-(मुक्ख) 1/1]	भावमोक्ष
दव्वविमुक्खो	[(दव्व)-(विमुक्ख) 1/1]	द्रव्यमोक्ष
य	अव्यय	और
कम्मपुहभावो	[(कम्म)-(पुह) वि-(भाव) 1/1]	कर्म की पृथक अवस्था

अन्वय– सव्वस्स कम्मणो खयहेदू जो अप्पणो परिणामो स हु भावमुक्खो णेयो य कम्मपुहभावो दव्वविमुक्खो।

अर्थ– समस्त कर्म के नाश का कारण जो आत्मा का परिणाम (है) वह निश्चय ही भावमोक्ष समझा जाना चाहिये और (द्रव्य) कर्म की (आत्मा से) पृथक अवस्था द्रव्यमोक्ष (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

38. सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं पावं हवंति खलु जीवा।
सादं सुहाउ णामं गोदं पुण्णं पराणि पावं च ।।

सुहअसुहभावजुत्ता	[(सुह) वि-(असुह) वि-(भाव)-(जुत्त) भूकृ 1/2 अनि]	शुभ और अशुभ भावों से युक्त
पुण्णं	(पुण्ण) 1/1 वि	पुण्यरूप
पावं	(पाव) 1/1 वि	पापरूप
हवंति	(हव) व 3/2 अक	होते हैं
खलु	अव्यय	निश्चय ही
जीवा	(जीव) 1/2	जीव
सादं	(साद) 1/1	साता वेदनीय
*सुहाउ (मूलशब्द)	[(सुह) वि-(आउ) 1/1]	शुभ आयु
णामं	(णाम) 1/1	नाम
गोदं	(गोद) 1/1	गोत्र
पुण्णं	(पुण्ण) 1/1 वि	पुण्यरूप
पराणि (कम्माणि)	(पर) 1/2 वि	अन्य
पावं	(पाव) 1/1 वि	पापरूप
च	अव्यय	और

अन्वय– सुहअसुहभावजुत्ता जीवा खलु पुण्णं पावं हवंति सादं सुहाउ णामं गोदं पुण्णं च पराणि पावं।

अर्थ– शुभ और अशुभ भावों से युक्त जीव निश्चय ही पुण्यरूप (और) पापरूप होते हैं। सातावेदनीय (कर्म), शुभ आयु, शुभ नाम, शुभ गोत्र पुण्यरूप (कर्म हैं) और अन्य पापरूप (कर्म हैं)।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीसरा अधिकार
(मोक्षमार्ग का निरूपण)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

39. सम्मद्दंसणणाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे।
ववहारा णिच्छयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा।।

सम्मद्दंसणणाणं	[(सम्मद्दंसण)-(णाण) 2/1]	सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान
चरणं	(चरण) 2/1	सम्यक्चारित्र को
मोक्खस्स	(मोक्ख) 6/1	मोक्ष का
कारणं	(कारण) 1/1	कारण
जाणे[1]	(जाण) विधि 2/1 सक	जानो
ववहारा	(ववहार) 5/1	व्यवहार (नय) से
णिच्छयदो	(णिच्छय) 5/1 पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	निश्चय (नय) से
तत्तियमइओ	[(त) सवि-(त्तियमइअ) 1/1 वि]	उन तीन के समूहयुक्त
णिओ	(णिअ) 1/1 वि	अपनी
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा

अन्वय– ववहारा सम्मद्दंसणणाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे णिच्छयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा।

अर्थ– व्यवहार (नय) से सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान (और) सम्यक्चारित्र को मोक्ष का कारण जानो। निश्चय (नय) से उन तीन (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र) के समूहयुक्त अपनी आत्मा (मोक्ष का कारण) (है)।

---

1. पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 679

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

40. रयणत्तयं ण वट्टइ अप्पाणं मुइत्तु अण्णदवियम्हि।
तम्हा तत्तियमइओ होदि हु मुक्खस्स कारणं आदा।।

रयणत्तयं	(रयणत्तय) 1/1	रत्नत्रय
ण	अव्यय	नहीं
वट्टइ	(वट्ट) व 3/1 अक	विद्यमान होता है
अप्पाणं	(अप्पाण) 2/1	आत्मा को
मुइत्तु	(मुअ) संकृ	छोड़कर
अण्णदवियम्हि	[(अण्ण) सवि -(दविय) 7/1]	अन्य द्रव्य में
तम्हा	अव्यय	इसलिए
तत्तियमइओ	[(त) सवि-(त्तियमइअ) 1/1 वि]	उन तीन के समूह-युक्त
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
हु	अव्यय	निश्चय ही
मुक्खस्स	(मुक्ख) 6/1	मोक्ष का
कारणं	(कारण) 1/1	कारण
आदा	(आद) 1/1	आत्मा

अन्वय– अप्पाणं मुइत्तु अण्णदवियम्हि रयणत्तयं ण वट्टइ तम्हा हु तत्तियमइओ आदा मुक्खस्स कारणं होदि।

अर्थ– आत्मा को छोड़कर अन्य द्रव्य में रत्नत्रय विद्यमान नहीं होता। इसलिए निश्चय ही उन तीन के समूहयुक्त (रत्नत्रययुक्त) आत्मा मोक्ष का कारण होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

41. जीवादी सद्दहणं सम्मत्तं रूवमप्पणो तं तु।
दुरभिणिवेसविमुक्कं णाणं सम्मं खु होदि सदि जम्हि।।

जीवादी[1]	[(जीव)+(आदी)]	
	[(जीव)-(आदि) 2/2]	जीवादि पर
सद्दहणं	(सद्दहण) 1/1	श्रद्धा
सम्मत्तं	(सम्मत्त) 1/1	सम्यक्त्व
रूवमप्पणो	[(रूवं)+(अप्पणो)]	
	रूवं (रूव) 1/1	स्वरूप
	अप्पणो (अप्प) 6/1	आत्मा का
तं	(त) 1/1 सवि	वह
तु	अव्यय	ही
दुरभिणिवेसविमुक्कं	[(दुरभिणिवेस)-	तार्किक दोष से
	(विमुक्क) भूकृ 1/1 अनि]	रहित
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
सम्मं	(सम्म) 1/1 वि	सम्यक
खु	अव्यय	भी
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
सदि	(सदि) 7/1 अनि	विद्यमान होने पर
जम्हि	(ज) 7/1 सवि	जिसमें

अन्वय– जीवादी सद्दहणं सम्मत्तं तं रूवमप्पणो तु जम्हि सदि दुरभिणिवेसविमुक्कं णाणं खु सम्मं होदि।

अर्थ– जीवादि पर श्रद्धा सम्यक्त्व (है)। वह (सम्यक्त्व) आत्मा का स्वरूप ही (है)। जिसके (सम्यक्त्व के) विद्यमान होने पर तार्किक दोष से रहित ज्ञान भी सम्यक् (अध्यात्म दृष्टिवाला) हो जाता है।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम प्राकृत व्याकरण 3-137)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

42. संसयविमोहविब्भमविवज्जियं अप्पपरसरूवस्स।
गहणं सम्मण्णाणं सायारमणेयभेयं तु।।

संसयविमोह	[(संसय)-(विमोह)-	संशय, मोह,
विब्भमविवज्जियं	(विब्भम)-(विवज्जिय)	भ्रम-रहित
	भूकृ 1/1 अनि]	
अप्पपरसरूवस्स	[(अप्प)-(पर) वि-	आत्मा, पर के
	(सरूव) 6/1]	स्वरूप का
गहणं	(गहण) 1/1	ज्ञान
सम्मण्णाणं	(सम्मण्णाण) 1/1	सम्यक्ज्ञान
सायारमणेयभेयं	[(सायारं)+(अणेयभेयं)]	
	सायारं (सायार) 1/1 वि	साकार
	{[(अणेय) वि-	और अनेक
	(भेय) 1/1] वि}	भेदवाला
तु	अव्यय	और

अन्वय- अप्पपरसरूवस्स संसयविमोहविब्भमविवज्जियं गहणं सम्मण्णाणं सायारमणेयभेयं तु।

अर्थ- आत्मा (और) पर के स्वरूप का संशय (स्व-पर भेद में संदेह) रहित, मोह (स्व में मूर्च्छा) रहित, भ्रम (पर में तादात्म्य) रहित ज्ञान सम्यक्ज्ञान (है), (वह सम्यक्ज्ञान) साकार (विकल्पात्मक) और अनेक भेदवाला (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

43. जं सामण्णं गहणं भावाणं णेव कट्टुमायारं।
अविसेसिदूण अट्ठे दंसणमिदि भण्णए समए।।

जं	(ज) 1/1 सवि	जो
सामण्णं	(सामण्ण) 1/1 वि	केवल होनारूप
गहणं	(गहण) 1/1	भान
भावाणं	(भाव) 6/2	पदार्थों का
णेव	अव्यय	न ही
कट्टुमायारं	[(कट्टुं)+(आयारं)]	
	कट्टुं[1] (अ) = करके	करके
	आयारं (आयार) 2/1	निश्चय (विकल्प)
अविसेसिदूण	(अ-विसेस) संकृ	न भेद करके
अट्ठे	(अट्ठ)[2] 2/2	पदार्थों में
दंसणमिदि	[(दंसणं)+(इदि)]	
	दंसणं (दंसण) 1/1	दर्शन
	इदि (अ) = निश्चयपूर्वक	निश्चयपूर्वक
भण्णए	(भण्णए)व कर्म 3/1 सक अनि	कहा जाता है
समए	(समअ) 7/1	आगम में

अन्वय– अट्ठे अविसेसिदूण णेव कट्टुमायारं भावाणं जं सामण्णं गहणं समए दंसणमिदि भण्णए।

अर्थ– पदार्थों में न (आपस में) भेद करके, न ही (कोई) निश्चय (विकल्प) करके (उन) पदार्थों का जो केवल होनारूप भान (है) (वह) आगम में निश्चयपूर्वक दर्शन कहा जाता है।

---

1. अनुस्वार का आगम हुआ है। (हेम प्राकृत व्याकरण, 1-26)
2. कभी-कभी द्वितीया का प्रयोग सप्तमी के स्थान पर पाया जाता है। (हेम प्राकृत व्याकरण, 3-135)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

44. दंसणपुव्वं णाणं छदमत्थाणं ण दोण्णि उवउग्गा।
जुगवं जम्हा केवलिणाहे जुगवं तु ते दोवि।।

*दंसण-	(मूलशब्द) (दंसण) 1/1	दर्शन
पुव्वं	पुव्वं (अ) = प्रारंभ में	प्रारंभ में
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
छदमत्थाणं	(छदमत्थ) 6/2 वि	छदमस्थों के
ण	अव्यय	नहीं
दोण्णि	(दो) 1/2 वि	दो
उवउग्गा	(उवउग्ग) 1/2	उपयोग
जुगवं	अव्यय	एक साथ
जम्हा	अव्यय	क्योंकि
केवलिणाहे	[(केवलि) वि-(णाह) 7/1]	केवली भगवान में
जुगवं	अव्यय	एक साथ
तु	अव्यय	परन्तु
ते	(त) 1/2 सवि	वे
दोवि	(दोवि) 1/2 वि	दोनों

अन्वय– छदमत्थाणं दंसणपुव्वं णाणं जम्हा दोण्णि उवउग्गा जुगवं ण तु केवलिणाहे ते दोवि जुगवं।

अर्थ– छदमस्थों के (स-रागियों के) प्रारंभ में दर्शन (होता है) (फिर) ज्ञान क्योंकि (उनके) दो उपयोग (दर्शन और ज्ञान) एक साथ नहीं (होते हैं)। परन्तु केवली भगवान में वे (दर्शन और ज्ञान) दोनों एक साथ (होते हैं)।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

45. असुहादो विणिवित्ती सुहे पवित्ती य जाण चारित्तं।
वदसमिदिगुत्तिरूवं ववहारणया दु जिणभणियं।।

असुहादो	(असुह) 5/1 वि	अशुभ से
विणिवित्ती	(विणिवित्ति) 1/1	निवृत्ति
सुहे	(सुह) 7/1 वि	शुभ में
पवित्ती	(पवित्ति) 1/1	प्रवृत्ति
य	अव्यय	और
जाण	(जाण) विधि 2/1 सक	समझो
चारित्तं	(चारित्त) 1/1	चारित्र
वदसमिदिगुत्तिरूवं	[(वद)-(समिदि)-(गुत्ति)	व्रत, समिति और
	-(रूव) 1/1 वि]	गुप्ति से युक्त
ववहारणया	(ववहारणय) 5/1	व्यवहारनय से
दु	अव्यय	निश्चय ही
जिणभणियं	[(जिण)-(भण→भणिय)	जिनेन्द्र देव के द्वारा
	भूक 1/1 सक]	कहा गया है

अन्वय- असुहादो विणिवित्ती य सुहे पवित्ती ववहारणया दु चारित्तं जाण वदसमिदिगुत्तिरूवं जिणभणियं।

अर्थ- अशुभ (भाव) से निवृत्ति और शुभ (भाव) में प्रवृत्ति व्यवहारनय से निश्चय ही चारित्र (है) (तुम) समझो। (वह चारित्र) व्रत, समिति और गुप्ति से युक्त (होता है)। जिनेन्द्रदेव के द्वारा कहा गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

46. बहिरब्भंतरकिरियारोहो भवकारणप्पणासट्ठं।
णाणिस्स जं जिणुत्तं तं परमं सम्मचारित्तं।।

बहिरब्भंतर-	[(बहिर) वि-(अब्भंतर) वि	बाह्य और अंतरंग
किरियारोहो	-(किरिया)-(रोह) 1/1]	क्रियाओं का निरोध
*भवकारण(मूलशब्द)	[(भव)-(कारण) 6/2]	संसार के कारणों का
-प्पणासट्ठं	(प्पणासट्ठं)[1] क्रिविअ	विनाश करने के लिए
णाणिस्स	(णाणी) 6/1 वि	ज्ञानी के
जं	(ज) 1/1 सवि	जो
जिणुत्तं	[(जिण)+(उत्तं)]	
	[(जिण)-(उत्त)	जिनेन्द्र देव के द्वारा
	भूकृ 1/1 अनि]	कहा गया है
तं	(त) 1/1 सवि	वह
परमं	(परम) 1/1 वि	उत्कृष्ट
सम्मचारित्तं	[(सम्म)-(चारित्त) 1/1]	सम्यक् चारित्र

अन्वय– भवकारणप्पणासट्ठं णाणिस्स बहिरब्भंतरकिरियारोहो तं परमं सम्मचारित्तं जं जिणुत्तं।

अर्थ– संसार के कारणों का विनाश करने के लिए ज्ञानी के बाह्य (शुभ-अशुभात्मक) और अंतरंग (विकल्पात्मक) क्रियाओं का निरोध (होता है) वह उत्कृष्ट सम्यक् चारित्र (है) जो जिनेन्द्र देव के द्वारा कहा गया है।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

1. चतुर्थी के अर्थ में अट्ठं अव्यय का प्रयोग हुआ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

47. दुविहं पि मोक्खहेउं झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा।
तम्हा पयत्तचित्ता जूयं झाणं समब्भसह।।

दुविहं	(दुविह) 2/1 वि	दो प्रकार के
पि	अव्यय	भी
मोक्खहेउं	[(मोक्ख)-(हेउ) 2/1]	मोक्ष के कारण को
झाणे[1]	(झाण) 7/1	ध्यान द्वारा
पाउणदि	(पाउण) व 3/1 सक	प्राप्त करते हैं
जं	अव्यय	चूँकि
मुणी	(मुणि) 1/1	मुनि
णियमा	(णियम) 5/1	नियम से
तम्हा	अव्यय	इसलिए
पयत्तचित्ता	[(पयत्त) वि-(चित्त) 5/1]	अनवरत प्रयास-सहित चित्त से
जूयं	(जूयं) 1/2 सवि अनि	तुम सब
झाणं	(झाण) 2/1	ध्यान का
समब्भसह	[(सम)+(अब्भसह)]	
	सम (अ) = खूब	खूब
	अब्भसह (अब्भस) विधि 2/2 सक	अभ्यास करो

अन्वय– जं झाणे मुणी णियमा दुविहं मोक्खहेउं पाउणदि तम्हा जूयं पि पयत्तचित्ता झाणं समब्भसह।

अर्थ– चूँकि ध्यान द्वारा मुनि नियम से दो प्रकार के (निश्चय और व्यवहार रूप) मोक्ष के कारण को प्राप्त करते हैं। इसलिए तुम सब भी अनवरत प्रयास- सहित चित्त से ध्यान का खूब अभ्यास करो।

---

1. कभी-कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है (हे.प्रा.व्या. 3-135)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

48. मा मुज्झह मा रज्जह मा दूसह इट्ठणिट्ठअट्ठेसु।
थिरमिच्छहि जइ चित्तं विचित्तझाणप्पसिद्धीए।।

मा	अव्यय	मत
मुज्झह	(मुज्झ) विधि 2/2 अक	मूर्च्छित होवो
मा	अव्यय	मत
रज्जह	(रज्ज) विधि 2/2 अक	आसक्त होवो
मा	अव्यय	मत
दूसह	(दूस) विधि 2/2 अक	दोष थोपो
इट्ठणिट्ठअट्ठेसु	[(इट्ठ)+(अणिट्ठअट्ठेसु)]	
	[(इट्ठ) वि-(अणिट्ठ) वि-(अट्ठ) 7/2]	इष्ट-अनिष्ट पदार्थों में
थिरमिच्छहि	[(थिरं)+(इच्छहि)]	
	थिरं (थिर) 2/1 वि	स्थिर
	इच्छहि(इच्छ) विधि 2/1 सक	चाहो
जइ	अव्यय	यदि
चित्तं	(चित्त) 2/1	चित्त को
विचित्तझाण-प्पसिद्धीए	[(विचित्त) वि-(झाण)-(प्पसिद्धि) 4/1]	अद्भुत ध्यान की सम्पन्नता के लिए

अन्वय– जइ विचित्तझाणप्पसिद्धीए थिरमिच्छहि चित्तं इट्ठणिट्ठअट्ठेसु मा मुज्झह मा रज्जह मा दूसह।

अर्थ– यदि (तुम) अद्भुत ध्यान की सम्पन्नता के लिए (प्रयत्नशील हो) (तो) स्थिर चित्त चाहो (और) (उसके लिए) इष्ट-अनिष्ट पदार्थों में (तादात्म्य करके) मूर्च्छित मत होवो, आसक्त मत होवो, (और) (उन पर) दोष मत थोपो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

49. पणतीससोलछप्पणचउदुगमेगं च जवह ज्झाएह।
परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरूवएसेण।।

पणतीससोलछप्पण-चउदुगमेगं	[(पणतीससोलछप्पणचउदुगं) +(एगं)]	
	[(पणतीस) वि-(सोल)[1]वि-(छ) वि-(प्पण) वि-(चउ) वि-(दुग) 2/1 वि]	पैंतीस, सोलह, छह, पाँच, चार, दो से युक्त और
	एगं (एग) 2/1 वि	एक को
च	अव्यय	और
जवह	(जव) विधि 2/2 सक	जपो
ज्झाएह	(ज्झाअ)[2] विधि 2/2 सक	ध्याओ
परमेट्ठिवाचयाणं	[(परमेट्ठि)-(वाचय) 6/2 वि]	परमेष्ठी का (अर्थ) बतलाने वाले
अण्णं	(अण्ण) 2/1 सवि	अन्य को
च	अव्यय	भी
गुरूवएसेण	[(गुरु)+(उवएसेण)]	
	[(गुरु)-(उवएस) 3/1]	गुरु के उपदेश से

अन्वय– परमेट्ठिवाचयाणं पणतीससोलछप्पणचउदुगमेगं जवह ज्झाएह च गुरूवएसेण अण्णं च।

अर्थ– परमेष्ठी का (अर्थ) बतलाने वाले (मंत्रों का) अर्थात् पैंतीस, सोलह, छह, पाँच, चार, दो से युक्त और एक (अक्षररूप मंत्रपदों) को जपो, ध्याओ और गुरु के उपदेश से अन्य को भी (जपो, ध्याओ)।

---

1. सोलस→सोल यहाँ स का लोप हुआ है।
2. ज्झा→ज्झाअ (अकारान्त धातुओं के अतिरिक्त अन्य) स्वरान्त धातुओं में विकल्प से अ जोड़ा जाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

50. णट्ठचदुघाइकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमईओ।
सुहदेहत्थो अप्पा सुद्धो अरिहो विचिंतिज्जो।।

णट्ठचदुघाइकम्मो	[(णट्ठ) भूकृ अनि-(चदु) वि-(घाइ)-(कम्म) 1/1]	समाप्त कर दिए गए है चार घातिया कर्म
दंसणसुहणाण-वीरियमईओ	[(दंसण)-(सुह)-(णाण)-(वीरियमईअ) 1/1 वि]	दर्शन, सुख, ज्ञान वीर्य से युक्त
सुहदेहत्थो	[(सुह) वि-(देहत्थ) 1/1 वि]	कल्याणकारी देह में स्थित
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा
सुद्धो	(सुद्ध) 1/1 वि	शुद्ध
अरिहो	(अरिह) 1/1	अरिहंत
विचिंतिज्जो	(विचिंत) विधिकृ 1/1 सक	समझी जानी चाहिए

अन्वय– णट्ठचदुघाइकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमईओ सुहदेहत्थो सुद्धो अप्पा अरिहो विचिंतिज्जो।

अर्थ– (जिसके द्वारा) चार घातिया कर्म समाप्त कर दिए गए है (जो) दर्शन- सुख-ज्ञान-वीर्य (अनंत चतुष्टय) से युक्त है, कल्याणकारी देह में स्थित है (वह) शुद्ध आत्मा अरिहंत समझी जानी चाहिए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

51. णट्ठट्ठकम्मदेहो लोयालोयस्स जाणओ दट्ठा।
पुरिसायारो अप्पा सिद्धो झाएह लोयसिहरत्थो।।

णट्ठट्ठकम्मदेहो	[(णट्ठ)+(अट्ठकम्मदेहो)]	
	[(णट्ठ) भूकृ अनि-(अट्ठ) वि-(कम्म)-(देह) 1/1]	त्याग दिया गया है आठ कर्मरूपी शरीर
लोयालोयस्स	[(लोय)+(अलोयस्स)]	
	[(लोय)-(अलोय) 6/1]	लोक और अलोक के
जाणओ	(जाणअ) 1/1 वि	जाननेवाले
दट्ठा	(दट्ठु) 1/1 वि	देखनेवाले
पुरिसायारो	[(पुरिस)+(आयारो)]	
	[(पुरिस)-(आयार) 1/1]	पुरुषाकार
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा
सिद्धो	(सिद्ध) 1/1 वि	सिद्ध
झाएह	(झाअ)[1] विधि 2/2 सक	ध्यान करो
लोयसिहरत्थो	[(लोय)-(सिहरत्थ) - 1/1]	लोक के शिखर पर स्थित

अन्वय– णट्ठट्ठकम्मदेहो लोयालोयस्स जाणओ दट्ठा पुरिसायारो अप्पा सिद्धो लोयसिहरत्थो झाएह।

अर्थ– (जिनके द्वारा) आठ कर्मरूपी शरीर त्याग दिया गया है, (जो) लोक और अलोक को जाननेवाले, देखनेवाले, पुरुषाकार आत्मा हैं (वे) सिद्ध (हैं) (तथा) लोक के शिखर पर स्थित (हैं)। (उनका) (तुम सब) ध्यान करो।

---

1. झा→झाअ (अकारान्त धातुओं के अतिरिक्त अन्य) स्वरान्त धातुओं में विकल्प से अ जोड़ा जाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

52. दंसणणाणपहाणे वीरियचारित्तवरतवायारे।
अप्पं परं च जुंजइ सो आइरिओ मुणी झेओ।।

दंसणणाणपहाणे	[(दंसण)-(णाण)-(पहाण) 7/1 वि]	दर्शन, ज्ञान प्रधान
वीरियचारित्तवर-तवायारे	[(वीरियचारित्तवरतव)+(आयारे)]	
	[(वीरिय)-(चारित्त)-(वर) वि-(तव)-(आयार) 7/1]	वीर्य, श्रेष्ठ चारित्र, तपाचार में
अप्पं	(अप्प) 2/1	स्वयं को
परं	(पर) 2/1 वि	पर को
च	अव्यय	और
जुंजइ	(जुंज) व 3/1 सक	जोड़ता है
सो	(त) 1/1 सवि	वह
आइरिओ	(आइरिअ) 1/1	आचार्य
मुणी	(मुणि) 1/1	मुनि
झेओ	(झेअ) विधिकृ 1/1 अनि	ध्यान किया जाना चाहिये

अन्वय– दंसणणाणपहाणे वीरियचारित्तवरतवायारे अप्पं च परं जुंजइ सो आइरिओ मुणी झेओ।

अर्थ– (जो) दर्शन (सम्यग्), ज्ञान (सम्यग्) प्रधान वीर्याचार, श्रेष्ठ चारित्राचार और तपाचार में स्वयं को और पर को जोड़ते हैं वे आचार्य मुनि ध्यान किये जाने चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

53. जो रयणत्तयजुत्तो णिच्चं धम्मोवदेसणे णिरदो।
सो उवज्झाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो तस्स।।

जो	(ज) 1/1 सवि	जो
रयणत्तयजुत्तो	[(रयणत्तय)-(जुत्त) भूक 1/1 अनि]	रत्नत्रयसहित
णिच्चं	अव्यय	सदा
धम्मोवदेसणे	[(धम्म)+(उवदेसणे)] [(धम्म)-(उवदेसण) 7/1]	धर्म का उपदेश देने में
णिरदो	(णिरद) 1/1 वि	तत्पर
सो	(त) 1/1 सवि	वह
उवज्झाओ	(उवज्झाअ) 1/1	उपाध्याय
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा
जदिवरवसहो[1]	[(जदि)-(वर) वि-(वसह) 1/1]	मुनियों में श्रेष्ठ और प्रमुख
णमो[2]	अव्यय	नमस्कार
तस्स[2]	(त) सवि 4/1	उसको

अन्वय– जो रयणत्तयजुत्तो णिच्चं धम्मोवदेसणे णिरदो जदिवरवसहो सो उवज्झाओ अप्पा तस्स णमो।

अर्थ– जो रत्नत्रय-(सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र) सहित (हैं), सदा धर्म का उपदेश देने में तत्पर (हैं), मुनियों में श्रेष्ठ और प्रमुख हैं वे उपाध्याय आत्मा (हैं), उनको नमस्कार।

---

1. वसह- समास के अन्त में होने से यहाँ वसह का अर्थ है प्रमुख।

2. 'णमो' के योग में चतुर्थी होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

54. दंसणणाणसमग्गं मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं।
साधयदि णिच्चसुद्धं साहू स मुणी णमो तस्स।।

दंसणणाणसमग्गं	[(दंसण)-(णाण) (समग्ग) 1/1 वि]	दर्शन, ज्ञान से युक्त
मग्गं	(मग्ग) 2/1	साधन
मोक्खस्स	(मोक्ख) 6/1	मोक्ष के
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
हु	अव्यय	निश्चय ही
चारित्तं	(चारित्त) 2/1	चारित्र को
साधयदि	(साधय) व 3/1 सक	पालते हैं
णिच्चसुद्धं	(णिच्चसुद्ध) 2/1 वि	सम्यक् (सदैव शुद्ध)
साहू	(साहु) 1/1	साधु
स	(त) 1/1 सवि	वह
मुणी	(मुणि) 1/1	मुनि
णमो[1]	अव्यय	नमस्कार
तस्स[1]	(त) सवि 4/1	उसको

अन्वय– जो दंसणणाणसमग्गं मोक्खस्स मग्गं णिच्चसुद्धं चारित्तं साधयदि हु स मुणी साहू तस्स णमो।

अर्थ– जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान से युक्त मोक्ष के साधन सम्यक् (सदैव शुद्ध) चारित्र को पालते हैं, निश्चय ही वह मुनि साधु (परमेष्ठी) (हैं), उनको नमस्कार।

---

1. 'णमो' के योग में चतुर्थी होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

55. जं किंचिवि चिंतंतो णिरीहवित्ती हवे जदा साहू।
लद्धूण य एयत्तं तदाहु तं तस्स णिच्छयं ज्झाणं।।

जं	(ज) 2/1 सवि	जिस किसी का
किंचिवि	अव्यय	थोड़ा भी
चिंतंतो	(चिंत) वकृ 1/1 सक	ध्यान करता हुआ
णिरीहवित्ती	{[(णिरीह) वि-(वित्ति) 1/1] वि}	निष्काम वृत्तिवाला
हवे[1]	(हव) व 3/1 अक	हो जाता है
जदा	अव्यय	जब
साहू	(साहु) 1/1	साधु
लद्धूण	(लद्धूण) संकृ अनि	प्राप्त करके
य	अव्यय	पादपूर्ति
एयत्तं	(एयत्त) 2/1	एकाग्रता को
तदाहु	[(तदा)+(आहु)]	
	तदा (अ) = तब	तब
	आहु (आहु)[2] 3/1 सक	कहा
तं	(त) 2/1 सवि	उसको
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसके
णिच्छयं	(णिच्छय) 2/1 वि	निश्चय
ज्झाणं	(ज्झाण) 2/1	ध्यान

अन्वय- जदा साहू जं किंचिवि चिंतंतो एयत्तं लद्धूण णिरीहवित्ती हवे य तस्स तं णिच्छयं ज्झाणं तदाहु।

अर्थ- जब साधु जिस किसी (पदार्थ) का थोड़ा भी ध्यान करते हुए एकाग्रता को प्राप्त करके निष्काम वृत्तिवाले हो जाते हैं तब उनके उस ध्यान को (जिनवरों ने) निश्चय (ध्यान) कहा।

---

1. प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पिशल, पृष्ठ-679।
2. प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पिशल, पृष्ठ-755।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

56. मा चिट्ठह मा जंपह मा चिंतह किंवि जेण होइ थिरो।
अप्पा अप्पम्मि रओ इणमेव परं हवे ज्झाणं।।

मा	अव्यय	मत
चिट्ठह	(चिट्ठ) विधि 2/2 अक	काय की क्रिया करो
मा	अव्यय	मत
जंपह	(जंप) विधि 2/2 सक	बोलो
मा	अव्यय	मत
चिंतह	(चिंत) विधि 2/2 अक	विचार करो
किंवि	अव्यय	कुछ भी
जेण	अव्यय	जिससे
होइ	(हो) व 3/1 अक	होता है
थिरो	(थिर) 1/1 वि	स्थिर
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा
अप्पम्मि	(अप्प) 7/1 वि	आत्मा में
रओ	(रअ) भूकृ 1/1 अनि	तृप्त हुआ
इणमेव	[(इणं)+(एव)]	
	इणं (इम) 1/1 सवि	यह
	एव (अ) = ही	ही
परं	(पर) 1/1 वि	सर्वोत्तम/उत्कृष्ट
हवे[1]	(हव) व 3/1 अक	होता है
ज्झाणं	(ज्झाण) 1/1	ध्यान

अन्वय– किंवि मा चिट्ठह मा जंपह मा चिंतह जेण अप्पा अप्पम्मि रओ थिरो होइ इणमेव परं ज्झाणं हवे।

अर्थ– कुछ भी काय की क्रिया मत करो, कुछ भी मत बोलो, कुछ भी विचार मत करो जिससे (जिसके फलस्वरूप) आत्मा आत्मामें तृप्त हुआ स्थिर हो जाता है। यह ही सर्वोत्तम/उत्कृष्ट ध्यान होता है।

---

1. प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पिशल, पृष्ठ-679।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

57. तवसुदवदवं चेदा ज्झाणरहधुरंधरो हवे जम्हा। तम्हा तत्तियणिरदा तल्लद्धीए सदा होह।।

तवसुदवदवं	[(तव)-(सुद)-(वदवन्त→वदवं)[1] 1/1 वि अनि]	तपवान, श्रुतवान, व्रतवान
चेदा	(चेद) 1/1	आत्मा
ज्झाणरहधुरंधरो	[(ज्झाण)-(रह)-(धुरंधर) 1/1 वि]	ध्यान रूपी रथ का धुरंधर
हवे[2]	(हव) व 3/1 अक	होता है
जम्हा	अव्यय	चूँकि
तम्हा	अव्यय	इसलिए
तत्तियणिरदा	[(त) सवि-(त्तियणिरद) 1/2 वि]	उन तीनों में तल्लीन
तल्लद्धीए	(तल्लद्धि) 4/1	उसकी प्राप्ति के लिए
सदा	अव्यय	हमेशा
होह	(हो) विधि 2/2 अक	होओ

अन्वय– जम्हा तवसुदवदवं चेदा ज्झाणरहधुरंधरो हवे तम्हा तल्लद्धीए सदा तत्तियणिरदा होह।

अर्थ– चूँकि तपवान, श्रुतवान, व्रतवान आत्मा ध्यान रूपी रथ का धुरंधर होता है इसलिए उसकी प्राप्ति के लिए हमेशा (तुम सब) उन तीनों (तप, श्रुत, व्रत) में तल्लीन होओ।

---

1. वान या वाला अर्थ के लिए 'मन्त' प्रत्यय जोड़ा जाता है। मन्त जोड़ते समय 'म' का 'व' हो जाता है।
   मन्त→वन्त→वं यहाँ म का व न का अनुस्वार तथा त का लोप हुआ है।
2. प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पिशल, पृष्ठ-679।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

58. दव्वसंगहमिणं मुणिणाहा दोससंचयचुदा सुदपुण्णा।
सोधयंतु तणुसुत्तधरेणं णेमिचन्दमुणिणा भणियं जं।।

दव्वसंगहमिणं	[(दव्वसंगहं)+(इणं)]	
	दव्वसंगहं (दव्वसंगह) 1/1	द्रव्यसंग्रह
	इणं (इम) 1/1 सवि	यह
मुणिणाहा	[(मुणि)-(णाह) 1/2]	मुनियों के स्वामी
दोससंचयचुदा	[(दोस)-(संचय)-	दोष समूह-रहित
	(चुद) भूकृ 1/2 अनि]	
सुदपुण्णा	[(सुद)-(पुण्ण)	श्रुत में पूर्ण
	1/2 वि]	
सोधयंतु	(सोधय) विधि 3/2 सक	शोधन करें
तणुसुत्तधरेणं	[(तणु)-(सुत्त)-	अल्प श्रुत के
	(धर) 3/1 वि]	धारक
णेमिचन्दमुणिणा	[(णेमिचन्द)-(मुणि)	नेमिचन्द मुनि के
	3/1]	द्वारा
भणियं	(भण→भणिय) भूकृ 1/1	रचा गया (कहा गया)
जं	(ज) 1/1 सवि	जो

अन्वय– तणुसुत्तधरेणं णेमिचन्दमुणिणा जं दव्वसंगहमिणं भणियं दोससंचयचुदा सुदपुण्णा मुणिणाहा सोधयंतु।

अर्थ– अल्प श्रुत के धारक नेमिचन्द मुनि के द्वारा जो यह द्रव्यसंग्रह रचा गया (कहा गया) है (उसका) दोष समूह-रहित, श्रुत में पूर्ण मुनियों के स्वामी (आचार्य) शोधन करें।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मूल पाठ

1. जीवमजीवं दव्वं जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं।
देविंदविंदवंदं वंदे तं सव्वदा सिरसा।।

2. जीवो उवओगमओ अमुत्ति कत्ता सदेहपरिमाणो।
भोत्ता संसारत्थो सिद्धो सो विस्स सोड्ढगई।।

3. तिक्काले चदुपाणा इंदियबलमाउआणपाणो य।
ववहारा सा जीवो णिच्छयणयदो दु चेदणा जस्स।।

4. उवओगो दुवियप्पो दंसणणाणं च दंसणं चदुधा।
चक्खु अचक्खू ओही दंसणमध केवलं णेयं।।

5. णाणं अट्ठवियप्पं मदिसुदिओही अणाणणाणाणि।
मणपज्जयकेवलमवि पच्चक्खपरोक्खभेयं च।।

6. अट्ठ चदु णाण दंसण सामण्णं जीवलक्खणं भणियं।
ववहारा सुद्धणया सुद्धं पुण दंसणं णाणं।।

7. वण्ण रस पंच गंधा दो फासा अट्ठ णिच्छया जीवे।
णो संति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति बंधादो।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

8. पुग्गलकम्मादीणं कत्ता ववहारदो दु णिच्छयदो।
चेदणकम्माणादा सुद्धणया सुद्धभावाणं।।

9. ववहारा सुहदुक्खं पुग्गलकम्मप्फलं पभुंजेदि।
आदा णिच्छयणयदो चेदणभावं खु आदस्स।।

10. अणुगुरुदेहपमाणो उवसंहारप्पसप्पदो चेदा।
असमुहदो ववहारा णिच्छयणयदो असंखदेसो वा।।

11. पुढविजलतेयवाऊ वणप्फदी विविहथावरेइंदी।
विगतिगचदुपंचक्खा तसजीवा होंति संखादी।।

12. समणा अमणा णेया पंचिंदिय णिम्मणा परे सव्वे।
बादरसुहमेइंदी सव्वे पज्जत्त इदरा य।।

13. मग्गणगुणठाणेहि य चउदसहि हवंति तह असुद्धणया।
विण्णेया संसारी सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया।।

14. णिक्कम्मा अट्ठगुणा किंचूणा चरमदेहदो सिद्धा।
लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवएहिं संजुत्ता।।

15. अज्जीवो पुण णेओ पुग्गलधम्मो अधम्म आयासं।
कालो पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

16. सद्दो बंधो सुहुमो थूलो संठाण भेद तम छाया।
उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया।।

17. गइपरिणयाण धम्मो पुग्गलजीवाण गमणसहयारी।
तोयं जह मच्छाणं अच्छंता णेव सो णेई।।

18. ठाणजुदाण अधम्मो पुग्गलजीवाण ठाणसहयारी।
छाया जह पहियाणं गच्छंता णेव सो धरई।।

19. अवगासदाणजोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं।
जेण्हं लोगागासं अल्लोगागासमिदि दुविहं।।

20. धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा य संति जावदिये।
आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्तो।।

21. दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो।
परिणामादी लक्खो वट्टणलक्खो य परमट्ठो।।

22. लोयायासपदेसे इक्किक्के जे ठिया हु इक्किक्का।
रयणाणं रासी इव ते कालाणू असंखदव्वाणि।।

23. एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवप्पभेददो दव्वं।
उत्तं कालविजुत्तं णादव्वा पंच अत्थिकाया दु।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

24. संति जदो तेणेदे अत्थित्ति भणंति जिणवरा जम्हा।
काया इव बहुदेसा तम्हा काया य अत्थिकाया य।।

25. होंति असंखा जीवे धम्माधम्मे अणंत आयासे।
मुत्ते तिविह पदेसा कालस्सेगो ण तेण सो काओ।।

26. एयपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि।
बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हु।।

27. जावदियं आयासं अविभागीपुग्गलाणुवट्टीदं[1]।
तं खु पदेसं जाणे सव्वाणट्ठाणदाणरिहं।।

28. आसव बंधण संवर णिज्जर मोक्खो सपुण्णपावा जे।
जीवाजीवविसेसा ते वि समासेण पभणामो।।

29. आसवदि जेण कम्मं परिणामेणप्पणो स विण्णेओ।
भावासवो जिणुत्तो कम्मासवणं परो होदि।।

30. मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोधादओऽथ विण्णेया।
पण पण पणदस तिय चदु कमसो भेदा दु पुव्वस्स।।

31. णाणावरणादीणं जोग्गं जं पुग्गलं समासवदि।
दव्वासवो स णेओ अणेयभेओ जिणक्खादो।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

32. बज्झदि कम्मं जेण दु चेदणभावेण भावबंधो सो।
कम्मादपदेसाणं अण्णोण्णपवेसणं इदरो।।

33. पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसभेदा दु चदुविधो बंधो।
जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुभागा कसायदो होंति।।

34. चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेदू।
सो भावसंवरो खलु दव्वासवरोहणे अण्णो।।

35. वदसमिदीगुत्तीओ धम्माणुपेहा परीसहजओ य।
चारित्तं बहुभेया णायव्वा भावसंवरविसेसा।।

36. जह कालेण तवेण य भुत्तरसं कम्मपुग्गलं जेण।
भावेण सडदि णेया तस्सडणं चेदि णिज्जरा दुविहा।।

37. सव्वस्स कम्मणो जो खयहेदू अप्पणो हु परिणामो।
णेयो स भावमुक्खो दव्वविमुक्खो य कम्मपुहभावो।।

38. सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं पावं हवंति खलु जीवा।
सादं सुहाउ णामं गोदं पुण्णं पराणि पावं च।।

39. सम्मद्दंसणणाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे।
ववहारा णिच्छयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

40. रयणत्तयं ण वट्टइ अप्पाणं मुइत्तु अण्णदवियम्हि।
तम्हा तत्तियमइउ होदि हु मुक्खस्स कारणं आदा।।

41. जीवादी सद्दहणं सम्मत्तं रूवमप्पणो तं तु।
दुरभिणिवेसविमुक्कं णाणं सम्मं खु होदि सदि जम्हि।।

42. संसयविमोहविब्भमविवज्जियं अप्पपरसरूवस्स।
गहणं सम्मण्णाणं सायारमणेयभेयं तु।।

43. जं सामण्णं गहणं भावाणं णेव कट्टुमायारं।
अविसेसिदूण अट्ठे दंसणमिदि भण्णए समए।।

44. दंसणपुव्वं णाणं छदमत्थाणं ण दोण्णि उवउग्गा।
जुगवं जम्हा केवलिणाहे जुगवं तु ते दोवि।।

45. असुहादो विणिवित्ती सुहे पवित्ती य जाण चारित्तं।
वदसमिदिगुत्तिरूवं ववहारणया दु जिणभणियं।।

46. बहिरब्भंतरकिरियारोहो भवकारणप्पणासट्ठं।
णाणिस्स जं जिणुत्तं तं परमं सम्मचारित्तं।।

47. दुविहं पि मोक्खहेउं झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा।
तम्हा पयत्तचित्ता जूयं झाणं समब्भसह।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

48. मा मुज्झह मा रज्जह मा दूसह इट्ठणिट्ठअट्ठेसु।
थिरमिच्छहि जइ चित्तं विचित्तझाणप्पसिद्धीए।।

49. पणतीससोलछप्पणचउदुगमेगं च जवह ज्झाएह।
परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरूवएसेण।।

50. णट्ठचदुघाइकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमईओ।
सुहदेहत्थो अप्पा सुद्धो अरिहो विचिंतिज्जो।।

51. णट्ठट्ठकम्मदेहो लोयालोयस्स जाणओ दट्ठा।
पुरिसायारो अप्पा सिद्धो झाएह लोयसिहरत्थो।।

52. दंसणणाणपहाणे वीरियचारित्तवरतवायारे।
अप्पं परं च जुंजइ सो आइरिओ मुणी झेओ।।

53. जो रयणत्तयजुत्तो णिच्चं धम्मोवदेसणे णिरदो।
सो उवज्झाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो तस्स।।

54. दंसणणाणसमग्गं मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं।
साधयदि णिच्चसुद्धं साहू स मुणी णमो तस्स।।

55. जं किंचिवि चिंतंतो णिरीहवित्ती हवे जदा साहू।
लद्धूण य एयत्तं तदाहु तं तस्स णिच्छयं ज्झाणं।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

56. मा चिट्ठह मा जंपह मा चिंतह किंवि जेण होइ थिरो।
अप्पा अप्पम्मि रओ इणमेव परं हवे ज्झाणं।।

57. तवसुदवदवं चेदा ज्झाणरहधुरंधरो हवे जम्हा।
तम्हा तत्तियणिरदा तल्लद्धीए सदा होह।।

58. दव्वसंगहमिणं मुणिणाहा दोससंचयचुदा सुदपुण्णा।
सोधयंतु तणुसुत्तधरेणं णेमिचन्दमुणिणा भणियं जं।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट–1

संज्ञा–कोश

संज्ञा शब्द	अर्थ	लिंग	गा.सं.
अक्ख	इन्द्रिय	अकारान्त नपुं.	11
अग्ग	अग्रभाग	अकारान्त नपुं.	14
अचक्खु	अचक्षु	*उकारान्त* पु., नपुं.	4
अजीव	अजीव	अकारान्त पु.	15, 23, 28
अट्ठ	पदार्थ	अकारान्त पु., नपुं.	43, 48
अणंत	अनंत	अकारान्त नपुं.	25
अणु	अणु/परमाणु	*उकारान्त* पु.	26, 27
अणुपेहा	अनुप्रेक्षा	*आकारान्त* स्त्री.	35
अणुभाग	अनुभाग	अकारान्त पु.	33
अत्थिकाय	अस्तिकाय	अकारान्त पु.	23, 24
अधम्म	अधर्म	अकारान्त पु.	15, 18, 20, 25
अप्प	आत्मा	अकारान्त पु.	29, 37, 39, 41, 42, 50, 51, 53,56
अप्प	स्वयं	अकारान्त पु.	52
अप्पाण	आत्मा	अकारान्त पु.	40
अरिह	अरिहंत	अकारान्त पु.	50
अलोग	अलोक	अकारान्त पु.	20
अलोगागास	अलोकाकाश	अकारान्त पु.	19
अलोय	अलोक	अकारान्त पु.	51

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवगास	अवकाश	अकारान्त पु.	19
अविरदि	अविरति	*इकारान्त* स्त्री.	30
आइरिअ	आचार्य	अकारान्त पु.	52
आउ	आयु	*उकारान्त* नपुं.	3, 38
आणपाण	श्वास निकालना, श्वास लेना	अकारान्त पु.	3
आद	आत्मा	अकारान्त पु.	8, 32, 40
	निज		9
आदव	आतप	अकारान्त पु.	16
आदि	आदि	**इकारान्त** पु.	8, 11, 15, 19, 21, 30, 31, 41
आयार	आचार	अकारान्त पु.	52
	आकार	अकारान्त पु.	51
	निश्चय/विकल्प	अकारान्त पु.	43
आयास	आकाश	अकारान्त नपुं.	15, 20, 25, 27
आसव	आस्रव	अकारान्त पु.	28, 31, 34
आसवण	प्रवेश	अकारान्त नपुं.	29
इंदिय	इन्द्रिय	अकारान्त पु., नपुं.	3, 11, 12
उज्जोद	उद्योत	अकारान्त पु.	16
उड्ढ	उर्ध्व	अकारान्त नपुं.	2
उप्पाद	उत्पाद	अकारान्त पु.	14
उवओग/उवउग्ग	उपयोग	अकारान्त पु.	4, 44
उवएस	उपदेश	अकारान्त पु.	49

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उवज्झाअ	उपाध्याय	अकारान्त पु.	53
उवदेसण	उपदेश	अकारान्त नपुं.	53
उवयार	व्यवहार	अकारान्त पु.	26
उवसंहार	संकोच	अकारान्त पु.	10
एयत्त	एकाग्रता	अकारान्त नपुं.	55
ओहि	अवधि	**इकारान्त** पु., स्त्री.	4, 5
कम्म	कर्म	अकारान्त पु., नपुं.	8, 9, 29, 32, 34, 36, 37, 50, 51
कसाय	कषाय	अकारान्त पु.	33
काअ	काय	अकारान्त पु.	25,26
काया	काय	*आकारान्त* स्त्री.	24
कारण	कारण	अकारान्त नपुं.	39, 40, 46
काल	काल	अकारान्त पु.	15, 20, 21, 23,25
कालाणु	कालाणु	***उकारान्त*** पु.	22
किरिया	क्रिया	*आकारान्त* स्त्री.	46
केवल	केवल	अकारान्त नपुं.	4, 5
कोध	क्रोध	अकारान्त पु.	30
खंध	स्कंध	अकारान्त पु.	26
खय	नाश	अकारान्त पु.	37
गइ	गमन	**इकारान्त** स्त्री.	2, 17
गंध	गंध	अकारान्त पु.	7
गमण	गति	अकारान्त नपुं.	17
गहण	ज्ञान/भान	अकारान्त नपुं.	42, 43

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गुण	गुण	अकारान्त पु., नपुं.	14, 15
गुणठाण	गुणस्थान	अकारान्त नपुं.	13
गुत्ति	गुप्ति	**इकारान्त** स्त्री.	35, 45
गुरु	गुरू	***उकारान्त*** पु.	49
गोद	गोत्र	अकारान्त पु., नपुं.	38
घाइ	घातिया	**इकारान्त** नपुं.	50
चक्खु	चक्षु	***उकारान्त*** पु., नपुं.	4
चरण	चारित्र	अकारान्त पु., नपुं.	39
चारित्त	चारित्र	अकारान्त नपुं.	35, 45, 52, 54
चित्त	चित्त	अकारान्त नपुं.	47, 48
चेद	आत्मा	अकारान्त पु.	10, 57
चेदण	भाव/चेतन/ आत्मा	अकारान्त पु.	8, 9, 32, 34
चेदणा	चैतन्य	*आकारान्त* स्त्री.	3
छाया	छाया	*आकारान्त* स्त्री.	16,18
जदि	मुनि	अकारान्त पु.	53
जल	जल	अकारान्त नपुं.	11
जिण	जिनेन्द्र	अकारान्त पु.	29, 31, 45, 46
जिणवर	जिनवर	अकारान्त पु.	1, 24
जीव	जीव	अकारान्त पु., नपुं.	1, 2, 3, 6, 7, 11, 17, 18, 19, 20, 23, 25, 28, 38, 41
जोग	योग	अकारान्त पु.	30, 33

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

झाण	ध्यान	अकारान्त पु., नपुं.	47, 48, 55, 56, 57
ठाण	स्थिति/स्थान	अकारान्त पु., नपुं.	18, 27
ठिदि	स्थिति	**इकारान्त** स्त्री.	33
णाण	ज्ञान	अकारान्त नपुं.	4, 5, 6, 39, 41, 44, 50, 52, 54
णाम	नाम	अकारान्त नपुं.	38
णाह	भगवान/स्वामी	अकारान्त पु.	44, 58
णाणावरण	ज्ञानावरण	अकारान्त नपुं.	31
णिच्छय	निश्चय	अकारान्त पु.	7, 8, 9, 10, 39
णिच्छयणय	निश्चयनय	अकारान्त पु.	3, 9, 10
णिज्जरा	निर्जरा	*आकारान्त* स्त्री.	28, 36
णियम	नियम	अकारान्त पु.	47
णिरोहण	रोकना	अकारान्त नपुं.	34
तम	तम	अकारान्त पु., नपुं.	16
तल्लद्धि	उसकी प्राप्ति	**इकारान्त** स्त्री.	57
तव	तप	अकारान्त पु.	36, 52, 57
तस	त्रस	अकारान्त पु.	11
तस्सडण	उसका नष्ट होना	अकारान्त नपुं.	36
तिक्काल	तीन काल	अकारान्त नपुं.	3
तेय	तेज	अकारान्त पु.	11
तोय	जल	अकारान्त नपुं.	17
थावर	स्थावर	अकारान्त पु.	11
दंसण	दर्शन	अकारान्त पु., नपुं.	4, 6, 43, 44, 50, 52, 54

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दविय	द्रव्य	अकारान्त पु., नपुं.	40
दव्व	द्रव्य	अकारान्त पु., नपुं	1, 16, 21, 22, 23, 37
दव्वासव	द्रव्यास्रव	अकारान्त पु., नपुं	31, 34, 58
दाण	देना	अकारान्त पु., नपुं.	19, 27
दुक्ख	दुःख	अकारान्त पु., नपुं.	9
दुरअभिणिवेस	तार्किक दोष	अकारान्त पु.	41
देविंद	देवेन्द्र	अकारान्त पु.	1
देस	प्रदेश	अकारान्त पु.	10, 24, 26
देह	देह/शरीर	अकारान्त पु., नपुं.	10, 14, 51
दोस	दोष	अकारान्त पु.	58
धम्म	धर्म	अकारान्त पु., नपुं.	15, 17, 20, 25, 35, 53
पच्चक्ख	प्रत्यक्ष	अकारान्त नपुं.	5
पज्जाय	पर्याय	अकारान्त पु.	16
पणास	विनाश	अकारान्त पु.	46
पदेस	प्रदेश	अकारान्त पु.	22, 25, 26, 27, 32, 33
पभेद	भेद	अकारान्त पु.	23
पमाण	प्रमाण	अकारान्त नपुं.	10
पमाद	प्रमाद	अकारान्त पु.	30
पयडि	प्रकृति	**इकारान्त** स्त्री.	33
परमट्ठ	परमार्थ	अकारान्त पु.	21

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परमेट्ठि	परमेष्ठी	**इकारान्त** पु.	49
परिणाम	परिवर्तन/भाव	अकारान्त पु.	21, 29, 34, 37
परिमाण	परिमाण	अकारान्त नपुं.	2
परिवट्ट	बदलाव	अकारान्त पु.	21
परीसहजअ	परीषह को जीतना	अकारान्त पु.	35
परोक्ख	परोक्ष	अकारान्त नपुं.	5
पवित्ति	प्रवृत्ति	**इकारान्त** स्त्री.	45
पवेसण	प्रवेश	अकारान्त पु., नपुं.	32
पसप्प	विस्तार	अकारान्त पु.	10
पसिद्धि	सम्पन्नता	**इकारान्त** स्त्री.	48
पहिय	पथिक	अकारान्त पु.	18
पाण	प्राण	अकारान्त पु., नपुं.	3
पाव	पाप	अकारान्त पु., नपुं.	28, 38
पुग्गल	पुद्गल	अकारान्त पु., नपुं.	8, 9, 15, 16, 17, 18, 20, 27, 31,36
पुढवि	पृथ्वी	**इकारान्त** स्त्री.	11
पुण्ण	पुण्य	अकारान्त पु., नपुं.	28
पुरिस	पुरुष	अकारान्त पु., नपुं.	51
फल	फल	अकारान्त पु., नपुं.	9
फास	स्पर्श	अकारान्त पु., नपुं.	7
बंध	बंध	अकारान्त पु.	7, 16, 33
बंधण	बंध	अकारान्त नपुं.	28
बल	बल	अकारान्त नपुं.	3

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भव	संसार	अकारान्त पु.	46
भाव	भाव	अकारान्त पु.	9, 32, 36, 38
	अवस्था		37
	पदार्थ		43
भावबंध	भावबंध	अकारान्त पु.	32
भावमुक्ख	भावमोक्ष	अकारान्त पु.	37
भावसंवर	भावसंवर	अकारान्त पु.	34, 35
भावासव	भावास्रव	अकारान्त पु.	29
भेद	भेद	अकारान्त पु., नपुं.	16, 30, 33, 35
भेय/भेअ	भेद/प्रकार	अकारान्त नपुं.	5, 23, 31, 42
मग्ग	साधन	अकारान्त पु.	54
मग्गण	मार्गणा	अकारान्त नपुं.	13
मच्छ	मछली	अकारान्त पु.	17
मणपज्जय	मनःपर्यय	अकारान्त पु.	5
मदि	मति	**इकारान्त** नपुं., स्त्री.	5
मिच्छत्त	मिथ्यात्व	अकारान्त नपुं.	30
मुक्ख	मोक्ष	अकारान्त पु.	40
मुणि	मुनि	**इकारान्त** पु.	47, 52, 54, 58
मुत्ति	मूर्तिक	**इकारान्त** स्त्री.	7
मोक्ख	मोक्ष	अकारान्त पु.	28, 39, 47, 54
रयण	रत्न	अकारान्त पु., नपुं	22
रयणत्तय	रत्नत्रय	अकारान्त नपुं.	40, 53
रस	रस	अकारान्त पु., नपुं.	7, 36

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रह	रथ	अकारान्त पु., नपुं.	57
रासि	ढेर	**इकारान्त** पु., स्त्री.	22
रूव	रूप	अकारान्त पु., नपुं.	15, 21
	स्वरूप	अकारान्त पु., नपुं.	41, 45
रोह	निरोध	अकारान्त पु.	46
रोहण	रोकना	अकारान्त नपुं.	34
लक्खण	लक्षण	अकारान्त पु., नपुं.	6
लोग	लोक	अकारान्त पु.	19, 20
लोय	लोक	अकारान्त पु.	14, 22, 51
लोयायास/ लोगागास	लोकाकाश	अकारान्त पु.	19, 22
वट्टण	परिवर्तन	अकारान्त पु., नपुं.	21
वण्ण	वर्ण	अकारान्त पु.	7
वणप्फदि	वनस्पति	**इकारान्त** पु.	11
वद	व्रत	अकारान्त पु., नपुं.	35, 45, 57
वय/वअ	व्यय	अकारान्त पु.	14
ववहार	व्यवहार	अकारान्त पु.	3, 6, 7, 8, 9, 10, 21, 39
ववहारणय	व्यवहारनय	अकारान्त पु.	45
वसह	ऋषभ	अकारान्त पु.	1
	प्रमुख	अकारान्त पु.	53
वाउ	वायु	***उकारान्त*** पु.	11
वित्ति	वृत्ति	**इकारान्त** पु.	55

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विंद	समूह	अकारान्त नपुं.	1
वियप्प	भेद	अकारान्त पु.	4
विसेस	भेद	अकारान्त पु., नपुं.	28, 35
विस्स	विश्व/लोक	अकारान्त पु.	2
विमोह	मोह	अकारान्त पु.	42
विब्भम	भ्रम	अकारान्त पु.	42
विणिवित्ति	निवृत्ति	**इकारान्त** स्त्री.	45
विमुक्ख	मोक्ष	अकारान्त पु.	37
वीरिय	वीर्य	अकारान्त पु., नपुं.	52
संख	शंख	अकारान्त पु., नपुं.	11
संगह	संग्रह	अकारान्त पु.	58
संचय	समूह	अकारान्त पु., नपुं.	58
संठाण	संस्थान	अकारान्त नपुं.	16
संवर	संवर	अकारान्त पु.	28
संसय	संशय	अकारान्त पु.	42
संसार	संसार	अकारान्त पु.	2
सद्द	शब्द	अकारान्त पु., नपुं.	16
सद्दहण	श्रद्धा	अकारान्त नपुं.	41
समअ	आगम	अकारान्त पुं	43
समास	संक्षेप	अकारान्त पु.	28
समिदि	समिति	**इकारान्त** स्त्री.	35, 45
सम्मचारित्त	सम्यक्चारित्र	अकारान्त नपुं.	46
सम्मण्णाण	सम्यक्ज्ञान	अकारान्त नपुं.	42

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्मत्त	सम्यक्त्व	अकारान्त नपुं.	41
सम्मद्दंसण	सम्यग्दर्शन	अकारान्त नपुं.	39
सरूव	स्वरूप	अकारान्त नपुं.	42
साद	साता वेदनीय	अकारान्त नपुं.	38
साहु	साधु	*उकारान्त* पु.	54,55
सिरसा	सिर से	अकारान्त नपुं.	1 अनि
सुद/सुत्त	श्रुत	अकारान्त नपुं.	57, 58
सुदि	श्रुति	इकारान्त स्त्री.	5
सुद्धणय	शुद्धनय	अकारान्त पु.	6, 8, 13
सुद्धभाव	शुद्धभाव	अकारान्त पु.	8
सुह	सुख	अकारान्त नपुं.	9, 50
हेदु/हेउ	कारण	*उकारान्त* पु.	34, 47

अनियमित संज्ञा

सदि	विद्यमान होने पर	34, 47

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रिया–कोश

अकर्मक

क्रिया	अर्थ	गा.सं.
चिंत	विचार करना	56
चिट्ठ	काय की क्रिया करना	56
दूस	दोष थोपना	48
मुज्झ	मूर्च्छित होना	48
रज्ज	आसक्त होना	48
वट्ट	विद्यमान होना	40
सड	विलीन होना	36
हव	होना	13, 21, 38, 55, 56, 57
हो	होना	11, 25, 26, 29, 33, 40, 41, 56, 57
अस	होना	7, 20,
	विद्यमान होना	24

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रिया–कोश

सकर्मक

क्रिया	अर्थ	गा.सं.
अब्भस	अभ्यास करना	47
आहु	कहा	55
आसव	प्रवेश मिलना/आना	29, 31
इच्छ	चाहना	48
जंप	बोलना	56
जुंज	जोड़ना	52
जव	जपना	49
जाण	जानना	27, 39, 45
झा/झाअ	ध्यान करना	49, 51
णी	गति कराना	18
धर	ठहराना	18
पभण	कहना	28
पभुंज	भोगना	9
पाउण	प्राप्त करना	47
भण	कहना	24, 26
वंद	प्रणाम करना	1
वियाण	जानना	19
साधय	पालना	54
सोधय	शोधन करना	58

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संबंधक कृदन्त

कृदन्त शब्द	अर्थ	कृदन्त	गा.सं.
अविसेसिदूण	न भेद करके	संकृ	43
मुइत्तु	छोड़कर	संकृ	40
लद्धूण	प्राप्त करके	संकृ अनि	55

भूतकालिक कृदन्त

अक्खाद	कहा गया	भूकृ अनि	31
उत्त	कहा गया	भूकृ अनि	20, 23, 29, 46
चुद	रहित	भूकृ अनि	58
जुत्त	युक्त/सहित	भूकृ अनि	38, 53
जुद	युक्त	भूकृ अनि	18
ठिद	अवस्थित	भूकृ अनि	14
ठिय	स्थित	भूकृ अनि	22
णट्ठ	समाप्त कर दिया गया	भूकृ अनि	50
	त्याग दिया गया		51
णिद्दिट्ठ	कहा गया	भूकृ अनि	1
परिणय	परिवर्तित	भूकृ अनि	17
भणिय	रचा गया/ कहा गया	भूकृ	6, 45, 58

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भुत्त	भोगा हुआ	भूकृ अनि	36
रअ	तृप्त हुआ	भूकृ अनि	56
वट्टिद	आच्छादित	भूकृ	27
विजुत्त	रहित	भूकृ अनि	23
विमुक्क	रहित	भूकृ अनि	41
विवज्जिय	रहित	भूकृ अनि	42

विधि कृदन्त

झेअ	ध्यान किया जाना चाहिये	विधिकृ अनि	52
णादव्व	समझा जाना चाहिये	विधिकृ	23
णायव्व	समझा जाना चाहिये	विधिकृ	35
णेअ/णेय	समझा/जाना जाना चाहिये	विधिकृ अनि	4, 12, 15, 31, 36, 37
लक्ख	पहचानने योग्य	विधिकृ अनि	21
वंद	वंदनीय	विधिकृ अनि	1
विचिंतिज्ज	समझा जाना चाहिये	विधिकृ	50
विण्णेअ/ विण्णेय	समझा जाना चाहिये	विधिकृ अनि	13, 29, 30

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वर्तमान कृदन्त

अच्छंत	ठहरता हुआ	वकृ	17
गच्छंत	चलता हुआ	वकृ	18
चिंतंत	ध्यान करता हुआ	वकृ	55

कर्मवाच्य

बज्झदि	बाँधा जाता है	कर्मवाच्य अनि	32
भण्णए	कहा जाता है	कर्मवाच्य अनि	43

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विशेषण–कोश

शब्द	अर्थ	गा.सं.
अजीव	अजीव (जीव रहित)	1
अणाण	अज्ञान	5
अणिट्ठ	अनिष्ट	48
अणु	छोटा	10
अणेय	अनेक	31, 42
अण्णोण्ण	परस्पर/आपस में	32
अब्भंतर	अंतरंग	46
अमण	अमनवाले	12
अमुत्ति	अमूर्त्तिक	2, 7, 15
अरिह	योग्य	27
अविभागी	अविभाग	27
असंख	असंख्यात	10, 22, 25
असमुहद	समुदघात को अप्राप्त	10
असुद्धणय	अशुद्धनय	13
असुह	अशुभ	38, 45
इक्किक्क	एक-एक	22
इट्ठ	इष्ट	48
इदर	विपरीत	12
	अन्य	32
उपयोगमय	उपयोगमय	2
कत्तु	कर्त्ता	2, 8

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किंचूण	कुछ कम	14
केवलि	केवली	44
गुरु	बड़ा	10
चरम	अंतिम	14
छदमत्थ	छदमस्थ	44
जाणअ	जाननेवाला	51
जावदिय	जितना	20, 27
जोग्ग	योग्य	19, 31
णाणा	अनेक	26
णाणी	ज्ञानी	46
णिअ	अपनी	39
णिक्कम्म	कर्म से मुक्त	14
णिच्च	नित्य	14
णिच्चसुद्ध	सम्यक् (सदैव शुद्ध)	54
णिच्छय	निश्चय	55
णिम्मण	मनरहित	12
णिरद	तत्पर/तल्लीन	53, 57
णिरीह	निष्काम	55
तणु	अल्प	58
त्तियणिरद	तीन में तल्लीन	57
त्तियमइअ	तीन के समूहयुक्त	39, 40
थिर	स्थिर	48, 56

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

थूल	स्थूल	16
दट्ठु	देखनेवाला	51
देहत्थ	देह में स्थित	50
धर	धारण करने वाला	58
धुरंधर	धुरंधर	57
पज्जत्त	पर्याप्ति से युक्त	12
पयत्त	अनवरत प्रयास-सहित	47
पर	अन्य	12, 38
	भिन्न	29
	पर	42
	सर्वोत्तम/उत्कृष्ट	56
परम	उत्कृष्ट	46
पहाण	प्रधान	52
पुण्ण	पूर्ण	58
पुव्व	पहला	30
पुह	पृथक	37
बहिर	बाह्य	46
बहु	बहुत	24, 26, 35
बादर	बादर	12
भोत्तु	भोक्ता	2
मुत्त	मूर्त	15, 25
रूव	से युक्त	21, 45
लक्ख	प्रकाशक	21
वर	श्रेष्ठ	52, 53

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वाचय	बतलानेवाला	49
विचित्त	अदभुत	48
विविह	अनेक प्रकार के	11
वीरियमईअ	वीर्य से युक्त	50
स	सहित	2, 28
संजुत्त	संयुक्त	14
संसारत्थ	संसार में स्थित	2
संसारी	संसारी	13
सदेह	अपनी देह	2
समग्ग	युक्त	54
समण	मनवाले	12
सम्म	सम्यक	41
सव्वण्हु	सर्वज्ञ देव	26
सहयारि	सहकारी	17, 18
सहिय	सहित	16
सामण्ण	साधारण	6
	केवल होना रूप	43
सायार	साकार	42
सिद्ध	सिद्ध	2, 14, 51
सिहरत्थ	शिखर पर स्थित	51
सुद्ध	शुद्ध	6, 13, 50
सुह	शुभ	38, 45
	कल्याणकारी	50
सुहम/सुहुम	सूक्ष्म	12, 16
सेस	शेष	15

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संख्या-कोश

शब्द	अर्थ	गा.सं.
अट्ठ	आठ	5, 6, 7, 14, 51
एग	एक	25, 49
एय/एअ	एक	11, 12, 26
चउ/चदु	चार	3, 6, 11, 30, 49, 50
चउदस	चौदह	13
चदुविध	चार प्रकार का	33
छ	छह	23, 49
ति	तीन	30
तिग	तीन से गमन करनेवाले	11
तिविह	तीन प्रकार का	25
दु	दो	4
दुग	दो से युक्त	49
दुविह	दो प्रकार का	19, 36, 47
दो	दो	7, 44
दोवि	दोनों	44
पंच	पाँच	7, 11, 12, 23
पणदस	पन्द्रह	30
पणतीस	पैंतीस	49
पण	पाँच	30, 49
विग	दो से गमन करनेवाले	11
सोलस	सोलह	49

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सर्वनाम–कोश

सर्वनाम शब्द	अर्थ	लिंग	गा.सं.
अण्ण	अन्य	पु., नपुं.	34, 40, 49
इम	यह	पु., नपुं.	23, 56, 58
एत	यह	पु., नपुं.	24
ज	जो	पु., नपुं.	1, 3, 21, 22, 28, 29, 31, 32, 34, 36, 37, 41, 43, 46, 53, 54, 55, 58
त	वह	पु., नपुं.	1, 2, 3, 17, 18, 20, 21, 22, 25, 27, 28, 29, 31, 32, 34, 37, 39, 40, 41, 44, 46, 52, 53, 54, 55, 57
सव्व	सब	पु., नपुं	12, 13, 27, 37

अनियमित सर्वनाम

जूयं	तुम सब	47

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अव्यय–कोश

अव्यय	अर्थ	गा.सं.
अत्थि	अस्ति	24
अथ	अब	30
अध	इसके बाद	4
अवि	ही	5
इति	ही	24
इदि	और	19
	अतः	36
	निश्चयपूर्वक	43
इव	समान/ की तरह	22, 24
एव	ही	56
एवं	इस प्रकार	23
कट्टुं	करके	43
कमसो	क्रमसे	30
किंचिवि	थोड़ा भी	55
किंवि	कुछ भी	56
खलु	अतः	34
	निश्चय ही	38
खु	ही	9
	निश्चय ही	27
	भी	41
च	और	4, 5, 36, 38, 52
	भी	49

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चदुधा	चार प्रकार का	4
जं	चूँकि	47
जइ	यदि	48
जदा	जब	55
जदो	चूँकि	24
जम्हा	चूँकि	24, 57
	क्योंकि	44
जह	जैसे	17, 18
जह कालेण	उचित समय आने पर	36
जावदिय	जितने	20, 27
जुगवं	एकसाथ	44
जे	पादपूरक	19
जेण	जिससे	56
ण	नहीं	25, 40, 44
णमो	नमस्कार	53, 54
णाणा	अनेक	26
णिच्चं	सदा	53
णेव	नहीं	17, 18
	न ही	43
णो	नहीं	7
ण्हं	वाक्यालंकार	19
तत्तो	इसलिए	20
तदा	तब	55

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तदो	उस कारण से	7
तम्हा	इसलिए	24, 40, 47, 57
तह	पादपूर्ति	13
तु	ही	41
	और	42
	परन्तु	44
तेण	इसलिए	24, 25, 26
दु	निस्सन्देह	3
	और	8, 30, 32, 33
	किन्तु	15
	पर न्तु	23
	निश्चय ही	45
परदो	दूसरी तरफ	20
पि	भी	47
पुण	और	6
	विपरीत	15
पुव्वं	प्रारंभ में	44
मा	मत	48, 56
य	और	3, 12, 13, 20, 24, 35, 36, 37, 45
	परन्तु	21
	पादपूर्ति	26, 55
वा	तथा	10

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वि	भी	26, 28
सदा	हमेशा	57
सव्वदा	सदा	1
सम	साथ-साथ	31
	खूब	47
हु	परन्तु	13
	निश्चय ही	22, 37, 40, 54

अनियमित अव्यय

अट्ठं	के लिये	46

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छंद[1]

छंद के दो भेद माने गए है-

1. मात्रिक छंद 2. वर्णिक छंद

1. मात्रिक छंद– मात्राओं की संख्या पर आधारित छंदो को 'मात्रिक छंद' कहते हैं। इनमें छंद के प्रत्येक चरण की मात्राएँ निर्धारित रहती हैं। किसी वर्ण के उच्चारण में लगनेवाले समय के आधार पर दो प्रकार की मात्राएँ मानी गई हैं- ह्रस्व और दीर्घ। ह्रस्व (लघु) वर्ण की एक मात्रा और दीर्घ (गुरु) वर्ण की दो मात्राएँ गिनी जाती हैं-

लघु (ल) (।) (ह्रस्व)

गुरु (ग) (ऽ) (दीर्घ)

(1) संयुक्त वर्णों से पूर्व का वर्ण यदि लघु है तो वह दीर्घ/गुरु माना जाता है। जैसे- 'मुच्छिय' में 'च्छि' से पूर्व का 'मु' वर्ण गुरु माना जायेगा।

(2)जो वर्ण दीर्घस्वर से संयुक्त होगा वह दीर्घ/गुरु माना जायेगा। जैसे- रामे। यहाँ शब्द में 'रा'और 'मे' दीर्घ वर्ण है।

(3) अनुस्वार-युक्त ह्रस्व वर्ण भी दीर्घ/गुरु माने जाते हैं। जैसे- 'वंदिऊण' में 'व' ह्रस्व वर्ण है किन्तु इस पर अनुस्वार होने से यह गुरु (ऽ) माना जायेगा।

(4) चरण के अंन्तवाला ह्रस्व वर्ण भी यदि आवश्यक हो तो दीर्घ/गुरु मान लिया जाता है और यदि गुरु मानने की आवश्यकता न हो तो वह ह्रस्व या गुरु जैसा भी हो बना रहेगा।

2. वर्णिक छंद– जिस प्रकार मात्रिक छंदों में मात्राओं की गिनती होती है उसी प्रकार वर्णिक छंदों में वर्णों की गणना की जाती है। वर्णों की गणना के लिए गणों

---

1. देखें, अपभ्रंश अभ्यास सौरभ (छंद एवं अलंकार)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

का विधान महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक गण तीन मात्राओं का समूह होता है। गण आठ हैं जिन्हें नीचे मात्राओं सहित दर्शाया गया है-

यगण	-	। ऽ ऽ
मगण	-	ऽ ऽ ऽ
तगण	-	ऽ ऽ ।
रगण	-	ऽ । ऽ
जगण	-	। ऽ ।
भगण	-	ऽ । ऽ
नगण	-	। । ।
सगण	-	। । ऽ

मात्रिक छंद

1. गाहा छंद–

गाहा छंद के प्रथम और तृतीय पाद में 12 मात्राएँ, द्वितीय पाद में 18 तथा चतुर्थ पाद में 15 मात्राएँ होती हैं।

उदाहरण–

ऽ । । ऽ ऽ ऽ ऽ	। । ।। । ।ऽ । ऽ। ऽ ऽ ऽ
जीवमजीवं दव्वं	**जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं।**
ऽ ऽ । ऽ । ऽऽ	ऽऽ ऽ ऽ । ऽ । । ऽ
देविंदविंदवंदं	**वंदे तं सव्वदा सिरसा।।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

2. उग्गाहा छंद–

उग्गाहा छंद के प्रथम और तृतीय पाद में 12 मात्राएँ, तथा द्वितीय व चतुर्थ पाद में 18 मात्राएँ होती हैं।

उदाहरण–

। । ॥ ऽ। । ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ। ऽ । ऽ ऽ ऽ

अणुगुरुदेहपमाणो उवसंहारप्पसप्पदो चेदा।

। । । । ऽ ॥ ऽ ऽ ऽ ॥ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ

असमुहदो ववहारा णिच्छयणयदो असंखदेसो वा।।

वर्णिक छंद

1. स्वागता छंद–

स्वागता छंद के प्रत्येक चरण में 11 वर्ण होते हैं। क्रमशः रगण (ऽ । ऽ), नगण (। । ।), भगण (ऽ । ।) और अंत में दो गुरु (ऽ ऽ)।

उदाहरण–

रगण नगण भगण ग ग रगण नगण भगण ग ग

ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ ऽ ऽ । ऽ ॥ । ऽ । । ऽ ऽ

दव्वसंगहमिणं मुणिणाहा दोससंचयचुदा सुदपुण्णा।

1 234 5 67 891011 123 45 67 891011

रगण नगण भगण ग ग रगण नगण भगण ग ग

ऽ । ऽ । । । ऽ ॥ ऽ ऽ ऽ । ऽ । । ॥ ऽ । । ऽ ऽ

सोधयंतु तणुसुत्तधरेणं णेमिचन्दमुणिणा भणियं जं।।

1 234 567891011 1 2 345 6 7 8910 11

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाथा संख्या	छंद	गाथा संख्या	छंद	गाथा संख्या	छंद
1.	गाहा	22.	गाहा	43.	गाहा
2.	गाहा	23.	उग्गाहा	44.	गाहा
3.	उग्गाहा	24.	उग्गाहा	45.	गाहा
4.	गाहा	25.	उग्गाहा	46.	गाहा
5.	गाहा	26.	उग्गाहा	47.	गाहा
6.	गाहा	27.	गाहा	48.	गाहा
7.	गाहा	28.	गाहा	49.	गाहा
8.	गाहा	29.	गाहा	50.	गाहा
9.	गाहा	30.	गाहा	51.	उग्गाहा
10.	उग्गाहा	31.	गाहा	52.	गाहा
11.	गाहा	32.	गाहा	53.	गाहा
12.	गाहा	33.	उग्गाहा	54.	गाहा
13.	गाहा	34.	गाहा	55.	उग्गाहा
14.	गाहा	35.	उग्गाहा	56.	गाहा
15.	उग्गाहा	36.	उग्गाहा	57.	गाहा
16.	गाहा	37.	उग्गाहा	58.	स्वागता
17.	गाहा	38.	उग्गाहा		
18.	गाहा	39.	गाहा		
19.	गाहा	40.	उग्गाहा		
20.	गाहा	41.	उग्गाहा		
21.	गाहा	42.	गाहा		

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सहायक पुस्तकें एवं कोश

1.	बृहद-द्रव्यसंग्रह	हिन्दी अनुवादक-पण्डित राजकिशोर जैन (श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द परमागम ट्रस्ट, इन्दौर एवं पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर)
2.	द्रव्यसंग्रह	: हिन्दी रूपान्तरकार - धनकुमार जैन (जैनविद्या संस्थान, जयपुर)
3.	द्रव्यसंग्रह	: सम्पादक - बलभद्र जैन (कुन्दकुन्द भारती प्रकाशन, नई दिल्ली)
4.	पाइय-सद्द-महण्णवो	: पं. हरगोविन्ददास त्रिविक्रमचन्द्र सेठ (प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, वाराणसी)
5.	अपभ्रंश हिन्दी कोश	: डॉ नरेश कुमार (डी. के प्रिंटवर्ल्ड (प्रा.) लि., नई दिल्ली)
6.	संस्कृत-हिन्दी शब्दकोश	: वामन शिवराम आप्टे (कमल प्रकाशन, नई दिल्ली)
7.	हेमचन्द्र प्राकृत व्याकरण, भाग 1-2	: व्याख्याता श्री प्यारचन्द जी महाराज (श्री जैन दिवाकर-दिव्य ज्योति कार्यालय, मेवाड़ी बाजार, ब्यावर)
8.	प्राकृत भाषाओं का व्याकरण	: लेखक -डॉ. आर. पिशल हिन्दी अनुवादक - डॉ. हेमचन्द्र जोशी (बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

9.	प्राकृत रचना सौरभ	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर)
10.	प्राकृत अभ्यास सौरभ	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर)
11.	प्रौढ प्राकृत रचना सौरभ, भाग-1	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर)
12.	प्राकृत अभ्यास सौरभ (छंद एवं अलंकार)	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर)
13.	प्राकृत हिन्दी व्याकरण (भाग-1, 2)	: लेखिका- श्रीमती शकुन्तला जैन संपादक- डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर)
14.	Dravyasaṁgraha	: Introduction and English Translation by Nalini Balbir, (Hindi Granth Kāryālaya,Mumbai)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org